सिंध की त्रिवेणी

शाह लतीफ़
सचल सरमस्त
चैनराइ सामी

राधास्वामी सत्संग ब्यास

ॐ अन्नपूर्णा ®
Charitable Trust
WZ-5A/1, Ram Nagar,
Choukhandi Chowk,
New Delhi-110018

विषय सूची

प्रकाशक की ओर से 7

शाह लतीफ़

जीवन परिचय 12

कलाम

वहदत 16
परमात्मा 22
सतगुरु 26
नाम-शब्द 30
भक्ति 36
मूर्ख मन 40
इश्क़ 44
विरह 54
प्रार्थना 58
कर्मकांड 64
उपदेश 68
विविध 78

सचल सरमस्त

जीवन परिचय 93

कलाम

वहदत 96
सतगुरु 104
आत्म-दर्शन 114

इश्क़ 118
रब्बी राह 136
जोगी 140
मन-मंदिर 148
विरह 150
विनती 154
काफ़ी 158

चैनराइ सामी
जीवन परिचय 166
कलाम
परमात्मा 170
सतगुरु 178
मनुष्य जन्म 186
नाम-शब्द 190
ज्योति 198
गुरुमुख 202
मनमुख 206
इश्क़ 210
आशिक़ 214
विरह 218
मन 222
माया 226
कर्मकांड 230
विविध 234

संदर्भ सूची 242
संदर्भ ग्रंथ 258
परमार्थ संबंधी पुस्तकें 262

शाह लतीफ़

जीवन परिचय

शाह लतीफ़ सिंध के पहले महान् सूफ़ी कवि थे जिन्होंने सिंध के लोगों की आम भाषा में अपना कलाम लिखा। उनका कलाम सीधे-सादे देहाती लोगों को बहुत भाता था। खेतों में हल चलाते किसान, थार की गर्म रेत पर ऊँटों पर सफ़र करते व्यापारी, गहरे समुद्र में जाल बिछाते मछुआरे आदि सभी इस कलाम को गाते हुए आनंदमग्न हो जाते थे।

शाह लतीफ़ का कलाम आज भी सिंध में उतने ही आदर, सम्मान और श्रद्धा के साथ पढ़ा, सुना और गाया जाता है, जितना मौलाना रूम का ईरान में। दुनिया के हर हिस्से में सिंधी लोग, ख़ास तौर पर बुज़ुर्ग पीढ़ी के लोग, शाह साहिब का कलाम बड़ी श्रद्धा और सत्कार से सुनते और गाते हैं।

शाह अब्दुल लतीफ़ के पूर्वज हैरात (अफ़गानिस्तान) से आकर सिंध (पाकिस्तान) के मतीआरी गाँव में बस गए*। मतीआरी से उनके पिता सैय्यद हबीब शाह हैदराबाद सिंध के हाला हवेली नामक स्थान में जा बसे। यहीं शाह अब्दुल लतीफ़ का जन्म हुआ। उनके जन्म और मृत्यु के समय के बारे में निश्चित रूप से कुछ नहीं कहा जा सकता। ऐसा माना जाता है कि उनका जन्म 1689 ई. में हुआ और 1752 ई. में वे परलोक सिधार गए। उनके पूर्वजों में शाह अब्दुल क़रीम जाने-माने रहस्यवादी लेखक और शायर हुए।

छः साल की उम्र में उन्हें अरबी वर्णमाला सीखने के लिये उस्ताद के पास भेजा गया। उन्होंने अरबी वर्णमाला के पहले अक्षर 'अलिफ़' से आगे पढ़ने से

* अमीना खेमसानी, द रिसालो ऑफ़ शाह अब्दुल लतीफ़, पेज 18

इनकार कर दिया और कहा कि सब कुछ एक 'अलिफ़' में समाया हुआ है। 'अलिफ़' अल्लाह के एक होने का सूचक है। यही तथ्य उनकी रचनाओं में पूरी तरह झलकता है। उनके कलाम से पता चलता है कि वे सिंधी, संस्कृत, फ़ारसी और अरबी भाषाओं में निपुण थे। वे क़ुरान और रूमी की मसनवी हमेशा अपने साथ रखते थे।

कहते हैं कि 21 वर्ष की आयु में जब वे गँजो पर्वत पर भ्रमण के लिये गए, तब उनकी मुलाक़ात योगियों की एक टोली से हुई। उनकी टोली में शामिल होकर उन्होंने हिंगलाज, झूनागढ़, लाहूत, लखपत, जैसलमेर और थरपारकर ज़िले के तीर्थों का भ्रमण किया। हिंगलाज की दूसरी यात्रा में वे योगियों से अलग होकर घर लौट आए। शाह लतीफ़ के जीवन पर योगियों के साथ भ्रमण का गहरा असर पड़ा।* उन्होंने अपने कलाम में योगियों की बहुत प्रशंसा की है।

शाह लतीफ़ ने सुर सोहनी की वाई में कहा है—'पीर असांडा हजरत मीराँ'† मीराँ का अर्थ है सरदार। हो सकता है कि उनका इशारा क़ादिरी संप्रदाय के प्रवर्तक हज़रत अब्दुल क़ादिर जिलानी की ओर हो। आडवाणी के अनुसार शाह लतीफ़ पंद्रह वर्ष की उम्र में शाह इनायत की संगति में आए, जिन्हें शाह इनात के नाम से भी पुकारा जाता था। शाह इनात हाला हवेली से 15 मील की दूरी पर झोंक में रहते थे। शाह लतीफ़ वहाँ जाकर उनका कलाम बड़ी श्रद्धा से सुनते और अपना कलाम सुनाते भी थे। वे दोनों आपस में बहुत निकट हो गए। 16 साल की संगति के बाद जब शाह इनात ने शरीर त्यागा, उस समय शाह लतीफ़ 31 वर्ष के थे। शाह इनात की मृत्यु से उनके दिल को गहरा सदमा पहुँचा। हालाँकि इस बात का संकेत कहीं नहीं मिलता कि शाह इनायत उनके गुरु थे, किंतु विद्वानों के अनुसार उनके कलाम पर शाह इनायत का गहरा प्रभाव नज़र आता है। हालाँकि शाह लतीफ़ के मुर्शिद के बारे में कोई ठोस सबूत नहीं मिलता, लेकिन उन्होंने अपने कलाम में मुर्शिद की ख़ूब महिमा की है।

* अब्दुल गफ़ार, फ़ंडामेंटल प्रिंसिपल, ऑफ़ स्पिरिच्यूऐलिटि, पेज 23

† मुहम्मद याकूब आगा, शाह जो रसालो एलिआस गंज लतीफ़, पेज 1794

एक बार शाह लतीफ़ की मुलाक़ात सिंध के प्रसिद्ध सूफ़ी फ़क़ीर सचल सरमस्त के दादा मियाँ साहिबड़िनों से हुई। उस वक़्त बालक सचल की उम्र पाँच साल की थी। उसे देखते ही शाह साहब ने फ़रमाया 'हमने जो देग चढ़ाई है, उसका ढक्कन यह बालक उठाएगा।' शाह लतीफ़ का यह कथन आगे चलकर सही साबित हुआ, क्योंकि जो बातें शाह लतीफ़ ने पोशीदा रखीं, सचल ने उन्हें खोलकर बयान किया।

कहा जाता है कि शाह लतीफ़ के चोला छोड़ने से कुछ समय पहले उनके मुरीदों ने उनकी कुछ हस्तलिखित रचनाएँ इस ख़्याल से पेश कीं कि उन्हें लिपिबद्ध देखकर वे ख़ुश होंगे। ख़ुश होने के बजाय उन्होंने सब कुछ उठाकर किराड़ झील में फेंक दिया, क्योंकि वे जानते थे कि आम लोग उनके कलाम का सार और भाव पूरी तरह नहीं समझ पाएँगें। मुरीदों को अपनी इस हरकत पर दुखी देखकर आपने फ़रमाया कि वे एक और नक़ल तैयार कर लें। मुरीदों ने ख़ुश होकर तुरंत नक़ल पेश की, क्योंकि कुछ लोगों ने उनके कलाम की नक़ल (प्रतिलिपि) सँभालकर अपने पास रखी हुई थी। इस कार्य में उनकी सेविका माई नियामत ने ख़ास मदद की, जिसे सारा कलाम ज़ुबानी याद था। शाह लतीफ़ ने इस कलाम को अपनी देखरेख में फिर से लिखवाया।

वे सदा चिंतन-मनन की अवस्था में रहते और एकांत पसंद करते थे। इसी मनोवृत्ति के कारण वे ऐसी जगह की तलाश में थे जहाँ बैठकर इबादत कर सकें। हाला हवेली से चार मील की दूरी पर किराड़ झील के पास रेत का एक काँटेदार टीला था, जो शाह लतीफ़ को बेहद पसंद आया। उस टीले को 'भिट' कहते थे। उन्होंने उसे आबाद करने का फ़ैसला किया। उनके शिष्यों ने दूर से रेत लाकर उस काँटेदार टीले को समतल किया। उसमें एक कमरा भूमिगत और दो कमरे उसके ऊपर बनवाए। तभी से वे शाह अब्दुल लतीफ़ 'भिटाई' के नाम से जाने जाते हैं।

ज़िंदगी के आख़िरी आठ साल उन्होंने भिट में गुज़ारे। शरीर त्यागने से कुछ दिन पहले वे भिट के नीचे भूमिगत कमरे में एकांतवास के लिये चले गए। वहाँ वे इबादत में मग्न रहे। इक्कीस दिन के बाद वे बाहर आए, स्नान किया और अपने ऊपर सफ़ेद चादर ओढ़कर लेट गए। उन्होंने मुरीदों से साज़ों पर

धुन छेड़ने को कहा। यह सिलसिला तीन दिन तक चलता रहा। तीन दिन बाद जब चादर हटाई गई तो उनकी रूह वजूद छोड़कर अल्लाह के मुक़ाम पर जा चुकी थी। उन्हें भिट में दफ़नाया गया। उनकी मज़ार आज भी वहाँ मौजूद है।

शाह लतीफ़ के कलाम *'शाह जो रसालो'* को विदेशों तक पहुँचाने का श्रेय जर्मन विद्वान् आरनेस्ट ट्रम्प और टी. आर. सोरले को दिया जाता है। इनके अलावा मिर्ज़ा कलीच बेग, गुरबख़्शानी और सिंधी भाषा के विद्वान् प्रो. कल्याण बी. आड़वाणी आदि ने भी इनके कलाम को न केवल सिंध और भारत में, बल्कि अंतर्राष्ट्रीय स्तर पर भी प्रसिद्ध किया।

वहदत

1. अवलि अल्लहु अलीमु आलॉ, आलम जो धणी,*
क़ादिरु पंहिंजी क़ुदरत सें, काइमु आहे क़दीमु,
वाली, वाहिदु, वह्दह्, राज़िकु, रब्बु रहीमु,
सो साराहि सचो धणी, चए हमदु हकीमु,
करे पाण करीमु, जोड़ूं जोड़ जहान जी।

2. वहदतां कसरत थी, कसरत वहदत कुल्लु,
हक़्क़ हक़ीक़ी हेकड़ो, बोलीअ बीअ म भुलु,
हू हुलाचो हुल्लु, बाइलल्लह् संदो सजणें।

3. कोड़ें कायाऊं तुंहिंजियूं, लखनि लख हज़ार,
जीउ सभकंहिं जीअ सें, दरसन धारों धार,
पिरियमि, तुहिंजा पार, कहिड़ा चई कीअं चवां॥

* कलाम का मूल रूप

वहदत का अर्थ है – एकता (अद्वैतभाव) अर्थात् परमात्मा को एक मानना। परमात्मा का कोई सानी नहीं है, वह बेमिसाल है, वह ही सच है, बाक़ी सब कुछ भ्रम और माया का छलावा है। हालाँकि उसकी सृष्टि में हर तरफ़ अनेकता नज़र आती है, परंतु इस अनेकता में भी वह हर जगह मौजूद है, वह सर्वव्यापक है। रूह और रब का रिश्ता अंश और अंशी का है। इस तरह असल में दोनों एक हैं, एक दूसरे से अभेद हैं। सच्चा सूफ़ी अपने अंदर कलामे इलाही से लिव लगाकर, ख़ुदा की पहचान कर लेता है और ख़ुदा में समाकर उसी का रूप हो जाता है।

1. अव्वल अल्लाह, अलीम, आला, वाली आलम का,*
ख़ुदा अपनी क़ुदरत में, है क़ायम अज़ल† से,
वाली एको एक वो, परवरदिगार, रब्ब, रहीम,
कर सिफ़त सच्चे साहिब की, कर इबादत और गुणगान,
रखे क़ायम जहान, मेहर अपनी से मेहरबान।

2. एक में अनेकता, अनेकता में वो एक,
है यह सच दायमी‡, इसे न जाना भूल,
अल्लाह क़सम, यह सारा शोरग़ुल, है मेरे दिलबर का खेल।

3. हज़ार, लाख, करोड़, दिखतीं सूरतें तेरी,
सबमें बसा एक तू, जुदा जुदा झलक तेरी,
प्रीतम! तेरा रूप अपार, क्या कहूँ, कैसे कहूँ॥

* कलाम का हिंदी काव्यानुवाद † सृष्टि के आरंभ से ‡ अमर-अविनाशी

4. हू पिणु कोन्हे हिन रे, हियु न हुनहां धार,
"अल् इन्सानु सिर्रयी व अना सिर्रुहु" परूड़िजि पचार,
कंदा विया तंवार, आलिम आरिफ़ अहिड़ी।

5. 'आऊं' सें उन पारि, कड़हिं तां कोन पियो,
"इन्न अल्लह वितरुयिह्हुब्बु अल्वित्र" नेई बियाई बारि,
हेकिड़ाईअ वटि हारि, हंजूं जे हुअण जूं।

6. जिन विञायो वुजूद खे, से फ़ानी थिया 'फ़ी अल्लह' में,
न तिनि क़ियामु, न कुऊदु में, न को कनि सुजूदु,
जेलां थिया नाबूदु, तेलां गड़िया बूदु खे।

7. तनु तसबीह, मनु मणियो, दिलि दंबूरो जिन,
तंदूं जे तलब जूं, वहदत सिरि वजनि,
"वह्दह् लाशरीक लह्", इहो रागु रगुनि,
से सुताई जागुनि, निंड इबादत उनि जी॥

8. वह्दह् लाशरीक लह्, ईयु हेकिड़ाई हक़्क़ु,
बियाईअ खे बखु, जन विधो, से विरिसिया।

9. 'वह्दह् लाशरीक लह्', बुधइ न बोड़ा,
कि तो कनें न सुआ, जे घट अंदरि घोड़ा,
गाड़ींदें गोढ़ा, जिति शाहिद थींदइ सामुहां।

4. 'वो'* न जुदा इससे, 'ये'† न जुदा उससे‡,
"मैं इन्सान का राज़ हूँ और इन्सान मेरा राज़ है", समझ और रख याद,
कर गए ऐलान, यही आलिम आरिफ़॥

5. ख़ुदी को मिटाये बिना, मिलता नहीं मर्तबा ला-मकाँ का,
'वो ख़ुदा एक, है वहदत पसन्द', द्वैत को तू दे जला,
बहा दे ख़ुदी आँसुओं में, वहदत के लिए॥

6. खोया वजूद जिन्होंने, हुए फ़ना ख़ुदा में,
अदा न करें नमाज़ वे, न सजदा ही करें,
जिन्होंने मिटाई हस्ती, हुए जज़्ब उस एक में॥

7. तन माला, मन मनका, दिल है तँबूरा,
आरज़ू की तारें, बजा रहीं राग वहदत का,
'वह्दह् ला-शरीक़' वो, गूँजे ये रग-रग में,
सोए हुए भी जागते हैं वो, ला-मकाँ में,
यही है उनकी पूजा, यही है इबादत॥

8. एकोएक वो, सानी न कोई उसका, दायमी सच है यही,
अपनाया द्वैत को जिसने, हुआ गुमराह मंज़िल से॥

9. ए बहरे! सुना नहीं तूने, 'सानी नहीं उस एक का',
क्या सुनते न कान तेरे, नाद जो घट अन्दर गूँज रहा,
होगा निबेड़ा जब अमलों का, तब रोएगा ज़ार-ज़ार॥

* ख़ुदा † इंसान ‡ क़ुरान शरीफ़ में यह फ़रमाया गया है।

10. वह्दह् लाशरीक लह्, इहो विहाइजु विय्यु,
खटें जे हाराइएं, हंधु तुंहिंजो हिय्यु,
पाणां चवंदुइ पिय्यु, भरे जामु जन्नत जो।

11. पाणहीं पसे पाणखे, पाणहीं महबूब,
पाणहीं ख़ल्क़े ख़ूब, पाणहीं तालिबु तन जो।

12. असीं सिकूं जिन खे, से तां असीं पाण,
हाणे वञु गुमान! सही सुञातो सुपिरीं।

10. वह्दह् लाशरीक से, कर ले सौदा सच का,
जीते चाहे हारे, है यही मौक़ा तेरा,
कहेगा ख़ुद ख़ुदा, पी, प्याला अमृत का॥

11. ख़ुद ही महबूब, ख़ुद ही करे दीदार अपना,
ख़ुद ख़ालिक़* कायनात का, आशिक़ उसका ख़ुद ही॥

12. याद करते हैं हम जिसे, वो तो हैं हम ख़ुद,
न रहा अब गुमान, जब पहचान लिया दिलबर को॥

* पैदा करनेवाला, सृष्टिकर्ता

परमात्मा

1. पाणहीं जल्ल जलालुहु, पाणहीं जानि जमालु,
पाणहीं सूरत पिरींअ जी, पाणहीं हुस्नु कमालु,
पाणहीं पीरु मुरीदु थिए, पाणहीं पाण ख़यालु,
सभु सभोई हालु, मंझां ई मअ्लूमु थिए।

2. सभकंहिं ड॒ांहं सामुहूं, को हंधु ख़ाली नाहि,
अहदा जे अरख थिया, से कांइर कबा कांहि ?
मुहब्बु मंझीं मन मांहिं, मूं अज॒ाणंदीअ उझियो।

3. दोसु पेही दरि आयो, थियो मिलण जो साइयो,
ड॒ींहें पुज॒ाणूं आणे असां खे, मौले मुहब मिलायो,
वियो विछोड़ो, थियो मेलापो, वाहिद वाउ वरायो,
हो जिन्हीं जो ड॒सु ड॒राड॒ो, ओड॒ो अज॒ु सो आयो,
अब्दुललतीफ़ चए, अची अजीबन पाण फ़ज़लु फ़रमायो।

4. जेकी मंझि जहान, सो तारीअ तग॒े तुंहिंजे,
लुत्फ़ जी, लतीफ़ु चए, तो वटि कमी कान,
अदुल छुटां आऊं न, को फेरो कजि फ़ज़ुल जो।

संत महात्मा परमात्मा की अपार महिमा करते हुए जीव को उससे मिलाप कर लेने की प्रेरणा देते हैं। शाह लतीफ़ का कलाम भी परमात्मा की महिमा से भरपूर है। प्रकाशमय परमात्मा के फ़रमान से ही सृष्टि बनी है, उसी के सहारे सारी कायनात का वजूद क़ायम है। शाह लतीफ़ का पैग़ाम है कि उस ख़ुदा को जंगलों, पहाड़ों में ढूँढ़ने के बजाय उसकी खोज अपने अंदर करें क्योंकि वह हमारे अंदर मौजूद है। अंतर्मुख अभ्यास करके ही उसकी पहचान की जा सकती है। पहचान हो जाने पर मुरीद को हर काम में उसकी रज़ा दिखाई देती है।

1. ख़ुद ही तेज पुंज, ख़ुद ही रोशन मीनार,
ख़ुद ही ख़ुदा, मुर्शिद ख़ुद ही, ख़ुद ही हुस्न बेमिसाल,
ख़ुद ही पीर, मुरीद भी ख़ुद ही, रचना रची फ़रमान से,
जब झाँका अपने अन्दर, हुआ मालूम हाल ये॥

2. समाया है वो हर तरफ़, थाँह न कोई ख़ाली उससे,
उन कायरों का क्या करें, जिन्हें भरोसा नहीं उस एक पे ?
बसता महबूब मन में मेरे, जाना मुझ अनजान ने॥

3. दिलबर मेरे आँगन आया, लगन-मुहूर्त मिलन का आया,
मुद्दत बाद मौला ने आकर महबूब मिलाया,
मिटी जुदाई, हुआ विसाल, साहिब ने बदला रुख़ क़िस्मत का,
दूर था जिसका मुक़ाम, आज वो क़रीब आया,
कहे अब्दुललतीफ़, ख़ुदा ने आकर ख़ुद फ़ज़ल फ़रमाया॥

4. क़ायम तेरे करम पे, है जो कुछ इस जहान में,
तू बख़्शिंद ! कहे लतीफ़, नहीं है कमी बख़्शिश की,
गर करे इंसाफ़ तो मिले न माफ़ी मुझे,
बख़्शिश हो तेरी तो मिले ज़िन्दगी मुझे॥

5. कोन्हे उति कोहियारु, जिति तो, भोरी! भांइयो,
पंधु म करि पहाड़ डे, वुजूदु ई वणिकारु,
धारिया भांइजि धार, पुछु पिरियां कर पाणु तूं।

6. जो तूं डोरिएं डूरि, सो सदा आहे साणु तो,
लालन लइ, लतीफ़ु चए, मंझी थी मअ्जूरि।
मंझां पंउं परूड़ि, तो मंझि आहिसि तकियो।

7. सोई राह रद्दि करे, सोई रहनुमाउ,
"वतुइज़्ज़ु मन् तशाउ वतुज़िल्लु मन् तशाउ"।

8. सभेई सुबहान जे, करि हवाले कम,
थियु तहक़ीकु तसलीम में, लाहे ग़म वहम,
क़ादिरु साणु करम, हासुलु करे हाज तो।

5. भोरी! है न प्रीतम वहाँ, जहाँ तू ढूँढ़े उसे,
मत ढूँढ़ उसे पहाड़ों में, गुलेगुलज़ार तेरे वजूद में,
ग़ैरों से रख दूरी, पता पिया का पूछ, अपने आप से॥

6. जिसे तू ढूँढ़ती दूर-दूर, है वो सदा साथ तेरे,
हुई बेहाल, लतीफ़ कहे, दिलबर को पाने के लिए,
दिल अन्दर उसका ठिकाना, पैठ और पहचान तू॥

7. वही करे गुमराह, वही बने रहनुमा,
जिसे चाहे बख़्शे इज़्ज़त, जिसे चाहे ज़लील करे॥

8. कर हवाले साहिब के, अपने सारे काम,
रह राज़ी उसकी रज़ा में, दूर कर सारे ग़म वहम,
मौला अपने करम से, सँवारे सारे काज तेरे॥

सतगुरु

1. थींदो तन तबीबु, दारूं मुंहिंजे दर्द जो,
बुकी डींदुमि बाझ जी, अची शाल अजीबु,
पिरयनि अची पाण कियो, संदो ग़ौरु ग़रीब,
डुखंदो सभोई डूरि कियो, मंझूं तन तबीब,
अदियूं! अब्दुललतीफ़ु चए, हातिकु आहि हबीबु।

2. भलाई आहीनि, पिरीं भलाईअ पांहिंजी,
सबाझा सिरि चड़ूहियो, डोरापो न डियनि,
मां डे मदियूं थियनि, सजण सजायिनि में।

3. चोडहींअ चंड! तूं उभिरीं, सहसें करिएं सींगार,
पलक पिरियां जी न पड़ें, जे हीलनि करिएं हज़ार,
जहिड़ो तूं सभ जमार, तहिड़ो दमु दोस्त जो।

4. सेवियो जिनि सुबहानु वीरि न विड़ूहे तिनि सें,
तोबह जे तासीर सें, तरी विया तूफ़ानु,
डेई तवक्कल तकियो, आरु लंघिया आसानु,
कामिलु किश्तीबानु, विच में गडियुनि वाहरू।

शाह साहिब का कलाम सतगुरु के यश और गुणगान से भरपूर है। वह निराकार दुखभंजन सुखदाता सतगुरु का साकार रूप धारण कर जीव को अपने मिलाप का आनंद बख़्श देता है। शाह साहिब ने सतगुरु को एक ऐसा वैद्य बताया है जो परमात्मा के विरह में होनेवाली तड़प का इलाज करता है और आत्मा को परमात्मा से मिला देता है।

1. मेरे तन के दर्द का, इलाज है मेरा दिलबर,
दे दया मेहर का दारू, काश वो आकर,
ग़ौर मुझ ग़रीब पर, करेगा प्रीतम ख़ुद आकर,
दूर किये सब दर्द, तबीब ने तन से,
बहिनो! कहे अब्दुललतीफ़, कामिल है मुर्शिद मेरा॥

2. भलाई से भरपूर प्रीतम, ख़ुद है रूप भलाई का,
दयाल पुरुष वो रूबरू, देता न कभी उलाहना,
भरा मैं अवगुणों से, साजन सद्गुणों का रूप॥

3. ऐ चौदहवीं के चाँद! उभरे तू कर सौ सिंगार,
सानी नहीं उसके पल भर दरस का, चाहे कर जतन हज़ार,
ता उम्र का जलवा तेरा, नहीं बराबर दोस्त की एक झलक का॥

4. सेवें जो सुबहान*, लहरें न लोढ़ें† उनको,
पार किया तूफ़ान, तौबा की तासीर‡ से,
सहज पार हुए सागर के, विश्वास के आधार से,
बीच सागर मिल गया, कामिल मल्लाह मददगार॥

---

* परमात्मा † बहाती है ‡ प्रभाव

5. ओझड़ि असूहन, देह घणोई दोरियो,
सगर रीअ सून्हनि, पहुती कान पंध करे।

6. पिरीअं पसायो पाहिंजो, निज़ारो नागाह,
लथो कटु कलूब ताँ, थी विरहूण वाह,
उमेदूँ अरवाह, पीअ पसन्दे पुनियूँ।

7. सौदो इहोई सफरो, सो मूँ पलइ पाइ,
वसु वेचारे नाहि को, तू आग़ा अर्ज़ ओनाइ,
रीअ हमराहीअ हादीअ जे, मूरि न मिड़े माइ,
लुतफ़ साण लघाँई, लाहरु लहिरन विच मां।

8. जानी आयो जूइ में, थियो क़लब करार,
वहलो विचांई वियो, करे ग़म गुज़ारु,
निज़रो निरवारु, पीय्य पसायो पाहिंजो।

9. परींदेई पेरि थिया, छड्डे गंजो गामु,
गुरूअ संदे गस में, जिनि कया तन तमामु,
वेही कयो न विच में, तिनि आदेसियुनि आरामु,
रह में गड्डियुनि रामु, पंधां छुटा कापड़ी।

5. बिना रहबर रास्ता तय न कर सके, न पहुँचे मंज़िल पर,
यूँ ही भटकते रहे जंगलों-बियाबानों में।

6. अचानक आकर दिलबर ने, बख़्शा दीदार अपना,
उतर गये जन्मों के ज़ंग, इक रहमत की निगाह से,
हो गई सब मुरादें पूरी, देखते ही दिलबर को।

7. सौदा कर सकूँ ज़िंदगी का, यही है मेरी अरदास,
सुन और क़बूल कर बिनती मुझ बेबस की,
बिना सहारे रहबर के कभी न पहुँच सकूँ मंज़िल तक,
मेहर से अपनी तू ही निकाल इन लहरों से।

8. झोपड़ी में आया जानी, आया करार दिल को,
पल भर में छोड़ गये ग़म सारे,
देखते ही सामने दिलबर को।

9. चल पड़े आदि से, गंजो* ग्राम छोड़कर,
गुरु की राह में, हुए जो देह से बेख़बर,
बैठ किया न बीच में, विश्राम जोगियों ने,
मिल गए राम राह में, ख़त्म हुआ सफ़र वहीं।

* योगियों के साथ भ्रमण करते हुए शाह लतीफ़ सबसे पहले 'गंजो टकरु' (गंजो नामक पर्वत) पर काली मंदिर में गए। यह इलाक़ा आजकल के हैदराबाद (सिंध, पाकिस्तान) शहर में है।

नाम-शब्द

1. अदियूं! सभि अंदाम, चड़नि मुंहिंजा चोरिया,
लारुनि जा लंव लाई, सा कीअं आछियां आम?
लगियस जहिं जे लाम, सो दिलासा दोस्तु मुंजे।

2. कारा कुन, कारी तुगी, जिति कारीहर कड़का,
मए मते मिहराण में, अचनि दुपारा दड़का,
वेंदे साहड़ सामुहां, झोल डिनसि झड़का,
खरिकिनि जा खड़का, सूंहां थियड़सि सीर में।

3. घुंडिनि पासे घिंड, गडु गुज़ारीनि गोदड़िया,
पलीतीअ खां पांहिंजा, पाकु रखियाऊं पिंड,
नांगा कनि न निंड, वञनि रुवंदा राम डे।

4. जुसे में ज़ुबार जो, ख़फ़ी ख़ीमूं खोड़ि,
जली तूँ ज़बान सें, चारई पहर चोरि,
फ़िकर सें फ़ुरक़ान में, इस्म आज़मु दोरि,
ब्या दर वञी म वोड़ि, ईउ अमल इआईं सपजे।

शाह साहिब समझाते हैं कि परमात्मा भी हमारे अंदर है और उसके साथ मिलाप करने का साधन शब्द या नाम भी हमारे अंदर ही है। सूफ़ी दरवेशों ने शब्द की धुन को कलमा, कलाम, बांगे-असमानी, इस्में आज़म आदि नामों से पुकारा है। भटकते हुए जीव को जब सतगुरु की शरण प्राप्त हो जाती है और उनके उपदेश पर अमल करके वह अपने अंतर में नाम या शब्द सुनता है, तब उसे बहिर्मुखी कर्मकांड व्यर्थ प्रतीत होते हैं और वह उन्हें छोड़ देता है। फिर उसकी आत्मा प्रेम और विरह से अभ्यास करती हुई आंतरिक धुन के सहारे निज धाम पहुँच जाती है और जीव अपना जीवन सार्थक कर लेता है।

1. सखियो! घंटियों की आवाज़ ने, मचाई हलचल अंग-अंग में,
लगाई लगन जो घुँघरवा ने, कहूँ कैसे सरेआम मैं?
पकड़ा दामन जिसका, वो दिलबर दिलासा भेज रहा॥

2. काले भँवर, काली रात, फुँकार काले नाग-सी,
उफ़नती मतवाली नदी में, दोनों तरफ़ है ख़तरा,
साजन की ओर जाते, लहरें देतीं झटका,
घंटियों की आवाज़ ही, रहबर बनी मँझधार में॥

3. मिल साथ गुज़ारें जोगी, सुनें अन्दर आवाज़ घंटे की,
कामना से निर्लेप, रखें निर्मलता तन की,
आँख न झपकते जोगी, रोते सिसकते चलते राम की राह पर॥

4. एक ख़ुदा के नाम का, गाड़ खेमा अन्तर में,
रख सिमरन जारी सदा, चारों पहर चित्त में,
क़ुरान के फ़रमान से, लगा ध्यान इस्मे आज़म* में,
ढूँढ़ न कहीं और तू, होगा हासिल अनमोल रतन इसी में।

* नाम

5. लुंगु कढियाऊं लाँग, मोटी कनि न मसहू,
जा इसलामाँ अगे हुई, सा सुआऊं बाँग,
सामी छडे सांग, गडिया गोरखनाथ खे।

6. चौधारी चड़ा, बुरनि बेलायुनि जा,
सुते संभारनि जो, पियुमि कनि पड़ाउ,
विहणु मूँ न वड़ाउ, सुण्यो जहाँइ झिजे हिंयों।

7. कंझे कीरत कीनरो, वाजो विलाती,
हँईं तन्दु हुज़ूर में, तहिं पारिस पेराती,
दिसन्देई डियाच खे, ज़ाहिरु थियो ज़ाती,
कढी तन्हिँ काती, विधो करटु कपार में।

8. सतुरु सिङि ड़ियुनि सें, लहज़े लाथाऊँ,
कीनर कुठी आहियाँ, इन्हनि जी आऊँ,
मूँ खे मारियाऊँ, आऊँ न जीअन्दी उनि रे।

5. बाँधकर लँगोटी जोगी, करें न वज़ू दुबारा,
आदि से आ रही बाँग सुनी योगियों ने, ज़िक्र था उसका
इस्लाम में भी,
छोड़कर सब आसरे, जा मिले अपने गुरू से।

6. चारों तरफ़ हैं बज रही घंटियाँ दिलबर की,
सोते हुए भी कानों में, है गूँज घंटियों की,
रोक न पाऊँ ख़ुद को, सुनी जब दिल ने वो गूँज सुरीली।

7. बज रहा जो राग, है वो साज़ अगम लोक का,
बजाई रबाब हाज़िरी में, पारस सम रबाबी (मुर्शिद) ने,
देखते ही मुरीद को, प्रकट हुआ नूरे इलाही,
ख़ंजर निकाल उसने, सिर अपना भेंट किया।

8. हटा दिया पर्दा पल भर में, शब्द की धुनकार ने,
है चीर डाला मुझे, इसी अनहद की नाद* ने,
मार दिया मुझे जीते-जी, अब न जी सकूँ बिन उसके।

* दिव्य धुन

9. महलें आयो मङणो, खणी साजु सिरी,
लगे तन्दु तुंबेर जी, पिया कोट किरी,
हंधें मागें हूइ थी, तुहिंजी, बीजल दांहं बुरी,
सिसी तंहिं सुलतान खाँ, अची घोट घुरी,
झूनागड़हु झुरी, पूंदी जहाँइ झरोक में।

10. घड़ो भगो त घोरियो, पाणां हो हिजाबु,
वाजटु वजे वुजूद में, रह्यो रूह रबाबु,
साहड़ रीअ सवाबु, आऊँ घणोई घोरियाँ।

9. आया बनकर मँगता, महल में, साज़ अजीब लेके,
रबाबी ने ऐसी छेड़ी तान कि ढह गए सारे किले,
हर तरफ़ मच गई धूम, बीजल* तेरी धाक की,
मुर्शिद ने मुरीद से, उसके सिर की माँग की,
डूबा दुःख में झूनागढ़, मचा महल में हाहाकार।

10. भला हुआ जो टूटा घड़ा, था जो रोड़ा राह का,
बजा बाजा वजूद में, जा बसी रूह रबाब में,
कर्म धर्म सब वार दिये, दिलबर तेरे लिये।

* एक बार झूनागढ़ के राजा राय दियाच के महल में (किसी दूसरे देश से) बीजल नामक रबाब बजानेवाला आया। उसने राजा के सामने ऐसी तान छेड़ी कि सारा महल गूँज उठा, राजा उस धुन को सुनकर मस्त हो गया और बीजल को भेंट माँगने के लिये कहा। बीजल ने राजा से उसका सिर माँगा। राजा ने कहा, 'तेरी तान के सामने इस सिर की भेंट तो बहुत तुच्छ है।' अपना सिर भेंट करने के बाद वह इस दुनिया को छोड़ रूहानी देश में पहुँच गया जहाँ दिव्य संगीत चारों तरफ़ गूँज रहा था।

भक्ति

1. सा सिट न सारीनि, अलिफ़ जंहिं जे अग में,
नाहकु निहारीनि, पना बिया पिरींअ लइ।

2. मान पुछनिई सुपिरीं, चितां लाहि म चोरु,
कढी छडि क़ल्ब मां, मारे कूड़ो कोरु,
हुन भरि संदो होरु, मथां तो माफ़ु थिए।

3. कूड़ु कमायुइ कचु, उथी ओरि अल्लह सें,
कढु तूं दग़ा दिलि मां, साहिब वणे सचु,
मुहबत संदो मन में, माणिक! बारिजि मचु,
इन परि उथी अचु, त सौदो थियई सफ़रो।

4. सारी राति सुबहानु, जागी जनि यादि कयो,
उनि जीय, अब्दुललतीफ़ु चए, मिटीअ लधो मानु,
कोड़ें कनि सलामु, आगहि अचियो उनि जे।

जिनकी लगन प्रभु से लग गई, वे मुर्शिद की समझायी युक्ति के अनुसार रातभर अपने प्रीतम की याद में जागते हैं और उसी की ख़ुमारी में मस्त रहते हैं। यही सच्ची भक्ति और इबादत है। शाह लतीफ़ ने उस एक प्रभु की भक्ति में लीन रहने का पैग़ाम दिया है। ग़ाफ़िल होकर सोने के बजाय जो रात भर उस प्रीतम की पवित्र याद में जागते हैं, वे मनुष्य जन्म के असली उद्देश्य को पूरा करने में सफल होते हैं।

1. याद न करें उस तुक को, शुरुआत हो जिसकी अलिफ़* से,
नाहक पलटें पन्नों को, प्रीतम को पाने के लिए॥

2. कहीं पूछ न बैठे प्रीतम, सो भुला न याद उसकी चित्त से,
कुरेद कर कूड़ कपट, निकाल फेंक दिल से,
मिल जाएगी माफ़ी, मालिक के दरबार में॥

3. कूड़ काँचा कमाया, उठ हाल सुना अल्लाह को,
निकाल दग़ा तू दिल से, सच भाए साहिब को,
मन में, ऐ इन्सान! भड़का मुहब्बत की अगन को,
उठ! आ इस रीति से, तो होगा तेरा सौदा सफल॥

4. जागें जो सारी रात, करें याद साहिब को,
कहे अब्दुललतीफ़, वो होते हैं सुलतान,
करोड़ों करें उनकी हाज़िरी में, सजदा और सलाम॥

* उर्दू वर्णमाला का पहला अक्षर, ख़ुदा

5. सारी राति सुजान, सौदो कनि साहिब सें,
बानहप भरे बेड़ियूं, हलिया जोप जुवान,
पाणी पहलवान, लहज़े मंझि लंघे विया।

6. असुखु जिनि अवेर, से सांझीअ रहनि सुम्ही,
लाहूती लतीफ़ु चए, आधीअ ड्रियनि उलेर,
सुतो लोकु पसी पिया, सामी मथे सेर,
केड़ांहं कंदा पेर ? मिड़ोई मथो थियो।

7. मरणु मुसल्लमु जिनि, वाहिदु तिनि न विसिरे,
मथे सगर कापड़ी, का नांगा निंड न कनि,
नेण सदाईं तिनि, ओजागनि उजारिया।

8. पियो लेटीं लुट, सज़ियूं रातियूं सुमहीं,
उथी आधीअ न करिएं, सपड़ साणु सहट,
रूंझे रात उपटिया, पेटिनियऊं पाणेट,
मेड़े तिआं मट, चूंडे भरिया चारणें।

9. सूफ़ीअ सैरु सभिनि में, जिअं रगुनि में साहु,
सा न करे गाल्हड़ी, जिअं पोयों परोड़े पसाहु,
आहिसि इयु गुनाहु, जे का करे पधरी।

10. सूफ़ी सालिम से विया, जे अकसर सें अड़ियार,
बाज़ी बाज़िंदनि खे, आहे अवेसार,
पिरियां सीं पहकार, रिं दीअ रसाणे कया।

5. सच्चे सौदागर जागें सारी रात, करें सौदा साहिब से,
भर बेड़ियाँ दीनता की, चल पड़े वीर जवान,
पार कर गये भवसागर, पल भर में पहलवान॥

6. बेकरारी जिन्हें आधी रात, सोते वे साँझ को,
लतीफ़ कहे उठें उछल, लाहूती* आधी रात को,
सोता सारा लोक देख, लाहूती बढ़ें रूहानी मंज़िल को,
कहाँ पसारें पैर, है वह हर तरफ हाज़िर॥

7. राज़ी जो मरने को, वे न विसारें उस एक को,
नांगा हो या कापड़ी, करें ना नींद राह में,
नैन सदा रोशन उनके, जो जागें सारी रात॥

8. पैर पसारे लुटा रहा, तू सोकर सारी रात,
करे न साजन से विसाल, उठकर आधी रात,
खोले रात को रूझे राजा† ने, ख़ज़ानों के किवाड़,
भर-भर घड़े ले गये, जागते माँगणहार॥

9. जैसे साँस रमी रग-रग में, सूफ़ी वही जो देखे उसे रमा सब में,
करे न ज़िक्र किसी से, अन्दर के रूहानी राज़ का,
होगा यह गुनाह, गर कर दे ज़ाहिर कभी॥

10. वे सूफ़ी पहुँचे सलामती से, जिन किया किनारा ख़ल्क़ से,
भूलें न बाज़ी इश्क़ की, खिलाड़ी हैं वे इश्क़ के,
बना साथी प्रीतम को, पहुँचे मस्त फ़कीर ख़ुमारी में॥

* पारब्रह्म, मन-माया के दायरे से परे † यहाँ अभिप्राय परमात्मा से है

मूर्ख मन

1. करहे खे कईं, विधमि पैद पलण जा,
लेड़ो लाणीअ खे चरे, नियर साणु नईं,
चांगे संदे चित में, साहिब! विझु सईं,
ओबाहियोसि अईं, लुत्फ़ु साणु लतीफ़ु चए।

2. चांगे चई चुकियासि, मथां अक न उलहे,
जंहिं वलि घणा विहाटिया, उन सें आरि लगियासि,
चौधारी चंदन वण, पची पूज पियासि,
रुआरे रतु कयासि, हिन कुधातूरे करहे।

3. आणे बधुमि वण जाइ, मान मुखिरियूं चरे,
कुधातूरो करहो, लिकियो लाणी खाइ,
इन मए संदे, माइ! मूंखे गाल्हड़ियुन गोड़हा कयो।

परमात्मा की भक्ति करके उसका मिलाप हासिल करने में सबसे बड़ी रुकावट मन है। लज़्ज़त का आशिक़ और इंद्रियों का ग़ुलाम बना मन कुमार्ग पर चल रहा है। शाह साहिब ने मन को अड़ियल ऊँट कहा है जो आक और लाणी जैसी काँटेदार झाड़ियों का लोभी है। चंदन के ख़ुशबूदार पौधे के पास होते हुए भी यह उनकी ओर ध्यान नहीं देता। इसी तरह भोग-विलास में लिप्त मन अपने ही अंतर में बैठे परमात्मा की ओर झाँकने की कोशिश तक नहीं करता। इससे बड़ी मूर्खता और क्या हो सकती है!

1. डाली कई ज़ंजीरें इस ऊँट को, रोकने के लिए,
फिर भी वो लाणी चरे, साथ ज़ंजीरों को लिए,
साहिब तू ही सुमति दे, इस ऊँट रूपी मन को,
कहे लतीफ़ मेहर कर, कि ऊँट ये सीधा चले॥

2. कह चुका कई बार ऊँट को, मुँह न डाल आक में,
किए कई बेहोश जिस बेल ने, नेह लगाया उससे,
चारों ओर पेड़ चन्दन के रसे, हैं इसकी पहुँच में,
ख़ून के आँसू रुलाए, इस अड़ियल ऊँट ने॥

3. लाकर बाँधा पेड़ से, कि ये कलियाँ खाए,
अड़ियल ऊँट लेकिन, छिप-छिप लाणी खाए,
ऐ मेरी माय! करनी इसकी मुझे ख़ूब रुलाए॥

4. पाणीअ मथे झूपिड़ा, मूरख उञ मरनि,
साहां ओड्रो सुपिरीं, लोचे तां न लहनि,
दमु न सुञाणनि, दांहूं कनि मुठनि जिअं।

5. कनीं कामण कयाइ? कीअं भंभोलिएं? करहा!
अखियुनि मथे अखिया, पिड़ में पेर गठाइ,
वग़ कि विसरियाइ? ब़धो जिअं घाणे वहीं।

6. खाए न खटणहार, चन्दन जा चूपा करे,
अगर ओड्रो न वञे, सिरखंड लहे न सार,
लाणीअ जे लग़ार, मयो मतारो कयो।

4. पानी किनारे झोंपड़े, मूरख प्यासे मर रहे,
साँस से क़रीब प्रीतम, फिर भी न मिल पाएँ उसे,
अपना आप पहचानें नहीं, मूरख हाय-हाय करें॥

5. ऐ ऊँट! किसने जादू किया तुझपे, कैसे पड़ा भरम में,
आँखों पर खोपे बँधे, पैरों मे छाले पड़े,
भुलाकर अपनी ज़ात को, कोल्हू में चक्कर काट रहा॥

6. खाए न सफ़ेद फूल, थूक देता चंदन तू,
आए न पास अगर के, सुध न लेता चंदन की तू,
लाणी के लगाव ने, ऐ ऊँट! कर दिया कुप्पा तुझे॥

इश्क़

1. वह्दह् जे वढिया, इल्लअल्लह सें ओरीनि,
हिंयों हक़ीक़त गड़ियो, तरीक़त तोरीनि,
मअ्रफ़त जे माठि सें, डेसांदरु डोरीनि,
सुख न सुता कड़हीं, वेही न वोड़ीनि,
कुलहनिऊं कोरीनि, आशिक़, अब्दुललतीफ़ चए।

2. सूरी आहि सींगारु, अगहीं आशिक़नि जो,
मुड़णु मोटणु मेहणो, थिया निज़ारे निरवारु,
कुसण जो क़रारु, असुल आशिक़नि खे।

3. सघनि सुधि न सूर जी, था रुंकनि रंजूरी,
पिया आहिनि पट में, मथनि मामूरी,
लगेन लंउ, लतीफ़ चए, सदा जी सूरी,
पिर्ति जनि पूरी, तनि रोयो विहामी रातिड़ी।

शाह साहिब की नज़र में सच्चा आशिक़ वही है जो रूहानी विकास की चारों अवस्थाओं—शरीअत, तरीक़त, मारफ़त और हक़ीक़त में से गुज़रता हुआ वहदत में पहुँच जाता है। वह अपनी हस्ती को नेस्तोनाबूद कर देता है। ख़ुदा का इश्क़ ही ख़ुदा की इबादत है। यह इश्क़ उसी के मन में जागता है, जिसे वह प्रीतम इश्क़ के भाले से ज़ख़्मी करता है। शाह साहिब के कलाम में एक तरफ़ तो जुदाई में बहते ख़ून के आँसू हैं और तड़प-तड़पकर दिलबर से मिलने की गुहार है, तो दूसरी तरफ़ विरह की ख़ुमारी के लुत्फ़ को लाबयान कहकर दिलबर से अर्ज़ की गई है कि क़यामत तक तेरे विरह की तड़प मेरे रोम-रोम में रमी रहे। आशिक़ कहता है: मेरे प्यारे! तेरे इश्क़ में मेरी जान क़ुरबान हो जाए, तेरे विसाल की उम्मीद में ही ज़िंदगी गुज़र जाए।

1. वहदत से जो क़त्ल हुए, करते ज़िक्र अल्लाह है एक,
फूँककर क़दम रखते तरीक़त* से,
मारफ़त† से उस देश को खोजते, बैठ सुन्न समाधि में हक़ीक़त‡
से दिल जोड़ते,
सोते न कभी चैन से, न बैठ वक़्त गँवाते,
कहे अब्दुललतीफ़ आशिक़ काट लेते, कंधों से सिर अपने॥

2. आदि से आशिक़ों का, सूली है सिंगार,
मुड़ना-लौटना है कलंक, होते शहीद सरेआम,
कट-कट कर मरने का क़रार, किया आशिक़ों ने सदा॥

3. इश्क़ से जो बेख़बर, वे क्या जानें दर्द को,
छटपटाते वो, जो घायल हुए, लगा रोग ला-इलाज,
ज़मीं पर पड़े लोटते,
लगी लिव जिन्हें, लतीफ़ कहे, सवार सदा सूली पर,
जज़्ब हुए जो इश्क़ में, वो रात गुज़ारें रोकर॥

* सदाचारिक शिक्षा † रूहानी अभ्यास से प्राप्त हुए आंतरिक भेद
‡ परमात्मा के मिलाप की उच्चतम रूहानी अवस्था

4. पहिरीं काती पाइ, पुछिजि पोइ पिरीतणो,
डुखु पिरियां जो डील में, वाजट जीअं वजाइ,
सीख़ुन माहु पचाइ, जे नालो गीयडुइ नींह जो।

5. जे अथेई सध सुर्क जी, त वउं कलालनि काटे,
लाहे रख लतीफ़ु चए, मथो वटि माटे,
तिक डेई पिक पियु तूं, मंझां घोट! घाटे,
जो वरनह् विहाटे, सो सिर वटि सरो सहांगो।

6. कोठे कुहे सुपिरीं, कोठे कुहण साणु,
नेज़े हेठां नींहं जे, पासे करि म पाणु,
जुलु, विञाए जाणु, आशिक़! अजल सामुहूं।

7. मुहब्बत जे मैदान में, करि पड़ाडो पटु,
सिरु सूरीअ धडु कुंगरियुन, मतां कुछीं कटु,
इश्क़ नांग निपटु, ख़बर खाधन खे पवे।

8. आशिक़ इअं न हुवनि, जिअं तूं सजे अडणे,
वञी दरि दोस्तनि जे, रतु डिहाणी रुवनि,
बीय परि किनहीं न पवनि, माकुरि महबूबनि सें।

9. आशिक़! माशूक़न जी, वठी वेहु गरी,
जिम वर्चे छडिएं, संदे दोस्त दरी,
डींदा बुकी बाझ जी, वेंदइ ठप ठरी,
असां तां न सरी, तो किअं सरी सुपिरीं?

4. पहले ख़ुद पर छुरी चला, फिर पूछ प्रीतम का पता,
हो तड़प ऐसी विरह की, बजने लगे साज़ दिल का,
जलती सलाख़ों में भून ख़ुद को, गर चाहे आशिक़ कहलाना॥

5. तलब घूँट की है अगर, जा कलाल की भट्टी पर,
कहे लतीफ़, पास मटके के, रख उतार तू अपना सिर,
घोंट अन्दर, गाढ़ा कर, तू लुत्फ़ से पी घूँट फिर,
जो होश उड़ा दे बहादुरों के, गर मिले वो घूँट देकर सिर,
तो भी सौदा सस्ता जान॥

6. प्रीतम बुलाकर क़त्ल करे, कर क़त्ल मिलाए संग अपने,
कर न तू किनारा, इश्क़ के नेजे की नोक से,
बढ़ आगे, मिटा हस्ती, आशिक़! वक़्त वस्ल का आया है॥

7. लगा ऐसा नारा मुहब्बत के मैदान में,
कि हो ज़मीं गुँजायमान,
सिर सूली पे, धड़ गुँबद पे, फिर भी न तू खोल ज़ुबान,
इश्क़ है नाग बेरहम, डसे जिसे, जाने वही॥

8. आशिक़ न होते ऐसे, सही-सलामत तुझ जैसे,
जाकर दर दोस्त के, बहाते आँसू ख़ून के,
किसी और दस्तूर से, होते न क़बूल महबूब को॥

9. आशिक़! जा बैठ, पकड़ माशूक़ की गली,
कहीं छोड़ न देना दर दिलबर का, हो बेज़ार कभी,
देगा दवा मेहर की ऐसी, भर जाएँगे ज़ख़्म सभी,
महबूब मेरे! बिन तेरे मेरी गुज़र नहीं, फिर तूने कैसे गुज़ारी॥

10. रगू थियूं रबाबु, वजनि वेल सभकंहीं,
लुछणु कुछणु न थियो, जानिबु रे जबाबु,
सोई संधींदुमि सुपिरीं, कयसि जंहिं कबाबु,
सोई ऐनु अज़ाबु, सोई राहत रूह जी।

11. वेज*! म बुकी डे! अला चडी म थियां!
सजणु मान अचे, कर लाहू थी कडहीं।

12. विर्सिया वेज वेचारा! दिलि में दर्द पिरियुनि जो,
उथियो वेजा! म विहो, वञो डब खणी,
बुकी डींदा बाझ जी, आया सूर धणी,
आया जीअ जीयारा, दिलि में दर्द पिरियुनि जो।

13. पुछनि से पसनि, जडहिं तडहिं पिरींअ खे,
डोरींदियूं डिसनि, अडण अजीबनि जा॥

14. पुछियोई, तां पूर; नात पुछणु होइ म पिरींअ खे,
डोरण वारियूं डूरि, हडि न आहीनि होत खे।

15. डोरियां, डोरियां, म लहां! शाल म मिलां होत!
मन अंदरि जा लोच, मछुणि मिलण सां माठी थिए।

16. डोरियां डोरियां, म लहां! साथी काल्हूणा,
लाहे लाडूणा, सफ़रि कंहिं सांगि विया।

* वैद

10. रगें बनी रबाब, बज रहीं तारें दिन-रात,
तड़पूँ, पर कह न पाऊँ, दिलबर देता न जवाब,
दिलबर ही लगाएगा मरहम, जिसने किया मेरा काम तमाम,
वही है दर्द, वही है राहत रूह की॥

11. वैद! न दे दवा! अल्लाह करे, होऊँ ना राज़ी कभी,
शायद आ निकले कभी, हाल पूछने दोस्त मेरा।

12. दिल में है दर्द दिलबर का, क्या करे वैद बेचारा,
उठो वैद! बैठो नहीं, ले जाओ दवा-दारू अपनी,
आ गया दर्द देनेवाला, जो देगा दवा रहमत की,
दर्दे-दिल दिया जिसने, वो दिलबर आया बख़्शने ज़िन्दगी॥

13. जो खोजतीं, सो पातीं, दिलबर का दीदार एक दिन,
खोजनेवालीं जा पहुँचीं पिया के आँगन में॥

14. गर है तलब तो बढ़ आगे, नहीं तो छोड़ तलाश दिलबर की,
तलाश करनेवालीं, हरगिज़ नहीं होतीं दूर दिलबर से॥

15. ढूँढ़ती रहूँ, पर न ढूँढ़ पाऊँ उसे, काश! ना मिलूँ दिलबर से,
मन में जो तड़प विरह की, ख़ुदा न करे बुझ जाए मिलन से॥

16. ढूँढ़ती रहूँ, पर न ढूँढ़ पाऊँ उसे, था जो कल तक साथ मेरे,
छोड़ मुझे चला गया वो, किस सफ़र पे, साथ किसके?

17. आऊं ड॒ोरियंइ, शाल म लहंइ! पिरीं! हुएं परे!
हड॒ि न साहु सरे, तन तसल्ली न थिए।

18. आऊं ड॒ोरियंइ, शाल म लहंइ! तन म मिलीं तूं,
लुंअ लुंअ मंझां मूं, लोच तुहिंजी न लहे।

19. आऊँ ड॒ोरियंइ, शाल म लहंइ! साज॒न! मञु सुवालु,
सिक तुंहिंजीअ, सुपिरीं! थिए जानि ज़वालु,
विहाणीअ विसालु, उथियां आरामी करे।

20. सिर जुदा, धड़ धार, दोग॒ जनीं जा देगि॒ में,
से मरु कनि पचार, हाज़ुर जनि जे हथ में।

21. मुलह् महांगो क़तरो, सिकणु शहादत,
असां इबादत, नज़रु नाज़ु पिरियनि जो।

22. मंधु पिअंदे मूं, साज॒नु सही सुञातो,
पी पियालो इश्क़ जो, सभुकी समुझियो सूं,
पिरियां संदे पार जी, अंदरि आगि॒ अथूं,
जिअणु नाहे जग॒ में, ड॒ींहं मिड़ेई ड॒ूं,
अला! अब्दुललतीफ़ चए, आहीं तूं ई तूं।

17. ढूँढ़ती रहूँ, काश! न ढूँढ़ पाऊँ, ए दिलबर! रहे तू दूर ही,
हरगिज़ न मिले चैन जी को, न आए तन को क़रार ही॥

18. ढूँढ़ती रहूँ, काश! न मिले तू, न पाऊँ तुझे इस वजूद में,
रोम-रोम में रमी तड़प जो, वो तड़प न हो ख़त्म कभी॥

19. ढूँढ़ती रहूँ, काश! न ढूँढ़ पाऊँ, तुझे, दिलबर! अर्ज़ मेरी यह मान,
तेरे इश्क़ में, प्रीतम! हो जाए जान मेरी क़ुरबान,
गुज़ारूँ ज़िन्दगी विसाल की उम्मीद में, मिले आराम मुझे
जब हो क़यामत।

20. सिर जुदा, धड़ जुदा, कटे अंग हैं देग में,
बेशक करें वे ज़िक्र उसका, जो रहें हाज़िर ले सिर हथेली पे॥

21. बेशक़ीमती है क़तरा इश्क़ की ख़ुमारी का,
आशिक़ी है शहीद हो जाना,
हमारे हिस्से में इबादत, नज़रे-इनायत है फ़ितरत उसकी॥

22. मय पीकर हमने, दिलबर को पहचान लिया,
पी प्याला इश्क़ का, सब कुछ हमने जान लिया,
अज़ल से बिछुड़े दिलबर की, है जलती आग अन्दर,
जीना नहीं जग में हमेशा, दो दिन का बसेरा,
कहे अब्दुललतीफ़, अल्लाह! बस तू ही तू॥

23. कुहे सो कर लहे, कोठे सो क़रीब,
इहा आदत सिखियो, हर ज़मान हबीबु,
तिछे सो तबीबु, सोई राहत रूह जी।

24. दारूं ऐं कारूं, जां की कया वेज मूं,
बुकी डींदा बाझ जी, निहारे नाडूं,
जनि जूं सेण लहनि सारूं, तनि तां डुखंदो डूरि थिए।

25. पाए कानु कमान में, मियां मारि म मूं,
मूं में आहीं तूं, मतां तुंहिंजो ई तोखे लगे।

26. हितां खणी हुति, जिनि रखियो से रसियूं,
साजन सूंहं सुरति, विखां ई वेझो घणो।

23. जो बुलाए और ज़िबह करे, है अज़ीज़ वही, सँभाले वही,
हर ज़माने में रही है, यही अदा हबीब* की,
लगाता चीरा जो तबीब†, वही है राहत रूह की॥

24. वैद ने आज़माईं ख़ूब दारू और दवाइयाँ,
नब्ज़ परख रहमान देगा दवा रहमत की,
करें सँभाल दोस्त जिनकी, दुःख दर्द उनके दूर हुए॥

25. तीर कसकर कमान में, दिलबर न चला मुझ पर,
मुझमें है तू, देख कहीं तेरा ही तीर तुझे न लग जाए।

26. रखा जिन्होंने यहाँ से क़दम वहाँ, जा पहुँचे मंज़िल अपनी,
रूबरू हो गया दीदार, दिलबर के जमाल का॥

* दिलबर, प्रीतम † वैद, हक़ीम

विरह

1. डिठे डींहं थियाम, कोहु जाणां कहिड़ा पिरीं?
सहसें सिज उलही, वाझाईंदे वियामि,
तनीं साल थियाम, जनीं साअत न सहां।

2. नासींदे निगाह, पहिरीं कजि पिरयनि डे,
अहवाल आजिज़नि जा, आखिजि लगि अल्लह,
रोजु निहारीन राह, अखियूं, अव्हांजे आसिरे।

3. डूंगर* ! तूं डाढो, डाढा! डाढायूं करीं,
मूं तन अंदरि तीअं वहीं, जिअं वणु वढे वाढो,
ई करम जो काढो, नात पथरि केर पंध करे?

4. डूंगर! डुख संदाइ, पिरींअ गडिजां त चवां,
भिनीअ थिएं भवारओं, बिया विंगा वर संदाइ,
चडी कान कयाइ, पेरु विञायुइ पिरींअ जो।

* पहाड़, पुन्नु की जुदाई में रेत के टीलों पर भटक रही ससी टीलों से बातें करती है।

आत्मा अपने परमात्मारूपी प्रियतम से अज़ल यानी आदिकाल से बिछुड़ी हुई है और उसकी जुदाई में तड़प रही है। विरहिणी आत्मा अपने प्रियतम की खोज में सुनसान जंगलों-पहाड़ों में भटक रही है। पहाड़ों को रास्ते की रुकावट समझकर आत्मा अपने प्रियतम से गिला-शिकवा करती है, फिर भी प्रियतम की खोज में लगी रहती है, वह हिम्मत नहीं हारती। जीवात्मा प्रियतम से अर्ज़ करती है कि या तो मेरी जान ले-ले, या फिर मुझ अभागिन को अपने दर्शन देकर धन्य कर दे।

1. हुई मुद्दत उसके दीदार को, क्या जानूँ कैसा है दिलबर?
डूबते देखे सूरज हज़ारों, गुज़ारे इंतज़ार में,
सहती न थी जुदाई पल भर, गुज़र गए बरस कई, उस बिन॥

2. उभरते ही, ऐ चाँद! देखना पहले मेरे दिलबर की ओर,
ख़ुदा के वास्ते, करना बयान हाल हम बेबसों का,
कि तेरी राह में हरदम, आँखें बिछाए बैठे हैं तेरे आसरे॥

3. ऐ डूंगर! तू बेदर्द बड़ा, संगदिल! क्यों ढाए सितम,
चीरे मेरे तन को ऐसे, जैसे काटे लकड़हारा,
है ये लिखा नसीब का, वरना कौन भटके पहाड़ों में?

4. ऐ डूंगर! बहुत सताया तूने, करूँ शिकायत जो दिलबर मिले,
भोर में तू लगे भयानक, और सताएँ पेचदार मोड़ तेरे,
अच्छा न किया तूने, जो मिटा दिए निशाँ दिलबर के क़दमों के॥

5. डूंगर! डोरापो, पहिरयों चवंदियसि पिरींअ खे,
"पहण पेर पिथूं कया, तिरियूं छिनियूं तो,
रहमु न पियुइ रूह में, क़दुरु मुंहिंजो को",
वाको कंदियसि: "वो! मूं सें जबलु थो जाडूं करे!"

6. डूंगर! डुखोयुनि खे, दिलासा डिजनि,
घणो पुछिजे तनि खे, जनि वटां होत वञनि,
तूं कीअं संदा तनि, पहण! पेर डुखोईयें?

7. तपी कंदें कोहु? डूंगर! डुखोयुनि खे,
तूं जे पहण पब जा, त लिंङ मुंहिंजा लोह,
कंहिंजो कोन्हे डोहु, अमुरु मूं सें ईंअ कयो?

8. बई वेठा रुवनि, डुखी डूंगर पाण में,
कंहिंखे कीन चवनि, मंझिनि जो पिरीतणो।

9. जियारियसि संभार, कुहु करीदंमि गडिजी?
वेर वतार वुजूद में, पिरियुनि जी पचार,
से सजण हुवनि न धार, जे हिंएं में हलु थिया।

10. मुठी थी मुदआ घुरे, मौतु थियो मौजूदु,
अचीं त अजु करियां, सुबाह जो सुजूदु,
जांकी ने वुजूदु, जांकी मेड़ि मुठीअ खे।

11. कहां, तां केचां परे! विहां, तां वटि मूं!
भुली डोरियमि भूं, अबसु आरीअ जाम खे।

5. ऐ डूंगर! करूँगी पहले दिलबर से शिकायत यह,
किए पाँव ज़ख्मी पत्थरों ने, छलनी हुए तलवे मेरे,
आया न रहम दिल में तेरे, क़द्र न की तूने कोई,
करूँगी विलाप, "हाय! पहाड़ ये, ढा रहा सितम मुझ पर।"

6. ऐ डूंगर! दिया जाता है दिलासा, दुखियारों को,
बँधा ढाड़स उनको, दिलबर छोड़ गए जिनको,
कैसे करता डूँगर! तू ज़ख्मी उनके पैरों को?

7. ऐ डूंगर! तपकर तू, क्या कर लेगा दुखियारों का,
गर तू है पहाड़ पत्थर का, तो लोह जैसे अंग मेरे,
है न किसी का दोष, लाई लिखवाकर धुर से मैं॥

8. बैठे रोते आपस में, बिरहन और डूंगर दोनों,
कहते न किसी और से, दिल में जो तड़प इश्क़ की॥

9. ज़िन्दा रखा तेरी याद ने, मिलकर मैं करूँ क्या?
हो रहा ज़िक्र दिलबर का, वजूद में सदा,
है न जुदा महबूब वो, जो समाया दिल में मेरे॥

10. अभागिन माँगे मुराद दीदार की, हुई मौत हाज़िर मगर,
गर आए आज पास मेरे, कर लूँ सजदा क़यामत का,
या तो ले ले जान मेरी, या फिर आ मिल अभागिन से॥

11. भटकती फिरूँ तो दूर है दिलबर, बैठूँ टिककर तो पास मेरे,
हुई गुमराह, बेवजह ढूँढ़ी भू सारी, प्रीतम को पाने के लिए।

प्रार्थना

1. तूं हबीबु, तूं तबीबु, तूं दर्द जी दवा,
जानिब! मुंहिंजे जीअ में, आज़र जा अनवा,
साहिब! डे शिफ़ा, मियां! मरीज़नि खे।

2. तूं हबीबु, तूं तबीबु, तूं दारूं खे दर्दनि,
तूं डिएं, तूं लाहिएं, डातर! खे डुखंदनि,
तडहीं फकियूं फ़रक़ु कनि, जडहीं अमुरु करियो उनि खे।

3. आडो चिकणु चाडु, मुंहिंजी मौज न सहे मकुड़ी,
मेड़े मठायुनि जो, बेहदि चाड़हियुम बारु,
चवण चारो नाहि को, बदियूं बेशुमारु,
कपरु कारूंभारु, उकारिएं इहसान सें।

4. दहशत दम्मु दरियाह में, जिति सटाणा सेसार,
बेहदि बागू बहर में, हैबतनाकि हज़ार,
सारियां कान सरीर में, ताक़त तवहां धार,
साहड़ जाम! सतार! सिघो रसिजि सीर में।

आत्मा अपने प्रियतम प्रभु से मिलाप के लिये बेचैन है। वह अपने आपको गुनहगार और प्रियतम प्रभु को सर्वसमर्थ मानती है। अपने प्रियतम से प्रार्थना करते हुए कहती है कि तू ही हबीब और तू ही तबीब है, अर्थात् तू ही मेरा प्यारा है, तू ही इस दुखियारी के दर्द की दवा है। मैं अपने गुनाहों का बोझ उठाए मँझधार में गोते खा रही हूँ, चारों तरफ़ दहशत का माहौल है। तू तो डूबते का सहारा है और पत्थरों को भी तार सकता है। अपने बिरद की लाज रखते हुए मुझ निमानी पर मेहर कर और मुझे बख़्श दे।

1. तू हबीब*, तू तबीब†, तू ही दर्द की दवा,
जानिब! मेरे जी में, हैं मर्ज़ बेशुमार,
साहिब! साईं! दे निजात, मरीज़ों को॥

2. तू हबीब, तू तबीब, तू दर्दमंदों की दवा,
तू ही दे, तू दूर करे, दुखियों के दुःख, ऐ दाता,
असर करे फाँकी तभी, जब हो हुक्म तेरा॥

3. सामने दलदल, फिर उफ़ान, मार लहरों की सहे न मेरी नाव,
समेटकर गुनाहों का, भर लिया बेहद भार,
कैसे कहूँ, कह न सकूँ, बुराइयाँ मेरी बेशुमार,
कर उपकार, लगा दे पार, इस काले अँधेरे किनारे से॥

4. दहशतभरा उफ़ान दरिया में, जहाँ जानवर खौफ़नाक,
हैं मगरमच्छ हज़ारों उसमें, बेहद ख़तरनाक,
बग़ैर तेरे, तन मेरा, मानो जैसे है बेजान,
ओ मसीहा! दिलबर मेरे! आ मिल जल्दी, मँझधार में॥

---

* दिलबर, प्रीतम † वैद, हक़ीम

5. दहशत दम्मु दरियाह में, जिति कुननि जो कड़को,
आहेमि उनहीं पार जो, दिलि अंदरि दड़को,
भञे सिक, सय्यदु चए, सीर संदो सड़को,
वाली! कजि वडु को, त पारि लंघियां बाझ सें।

6. "परिदेसां पंधु करे, सुणी आयुसि शानु,
मडां कहिड़ीअ मति सें? निसोरो नादानु!
सो को डियारिएं डानु, जो तमअ खे तरकु करे।"

7. जानिब! तूं जेडो, आहीं शान शऊर सें,
मूं ते करि, मुंहिंजा पिरीं! तोहु तुसी तेडो,
इयु कामिल! कमु केडो? जिअं निवाज़ींमि निगाह सें।

8. खोड़े, खणु म सुपिरीं! खंयई तां खोड़ि,
आदत जा अखियुनि जी, सा नेई निबाहिजि तोड़ि,
मूं में ऐबनि कोड़ि, तूं पाणु सुञाणिजि, सुपिरीं!

9. साहिब! तुंहिंजी साहिबी, अजबु डिठी सूं,
पन बोड़ीं पाताल में, पहण तारीं तूं,
जेकर अचीं मूं, त मेरियाई मानु लहां।

5. दहशतभरा उफ़ान दरिया में, जहाँ भँवर करें कड़का,
दिल अन्दर है ख़ौफ़, दरिया के उस पार का,
सैय्यद कहे, लहरों के जोश को, दे रहा मात इश्क़ मेरा,
ऐ मालिक! कर एहसान, उतरूँ पार मेहर तेरी से॥

6. दूर देस से चलकर आया, सुनकर तेरी शान,
क्या माँगूं सूझे नहीं, मैं निरा नादान,
दे ऐसा दान, कि ख़त्म हों ख़्वाहिशें मेरी॥

7. जानिब*! है जितनी ऊँची शान और शोहरत तेरी,
होकर राज़ी, दिलबर मेरे! कर मुझ पर मेहर उतनी,
ऐ मालिक! क्या मुश्किल तेरे लिए, गर नवाज़े अपनी निगाह से॥

8. मिलाकर नज़रें फिर न चुराना, गर बदली हैं निगाहें
तो फिर मिलाना,
आदत है जो आँखों की, आख़िर तक निभाना,
हैं ऐब करोड़ों मुझमें, बिरद अपना सँभाल, प्रीतम!

9. साहिब! तेरी साहिबी, है अजब देखी यूँ,
पन† डुबोये पाताल में, पत्थर तारे तू,
गर आए पास मेरे, तो मिले मान निमानी कूँ।

* दिलबर † पत्ता

10. जेड़ो तुंहिंजो नांउ, बाझ बि ओड़ियाई मङंइ,
रिअ थंभें, रिअ थूणियें, तूं छपरु, तू छांइ,
कुजाड़ो कहांइ ? तोखे मइलूमु सभका।

11. जीउ जियारियो, जीउ जियारियो, कीन मुंहंजड़ो हारियो,
पिरियनि जीअ पचार, सेणनि जीअ संभार, जड़िड़ो जीउ जियारियो,
उञियो तनु अमीक़ मां, पिरियुनि पूज पियारियो,
मर्जु मरीज़नि तां, इशारे साणु उतारियो,
करम करीमनि जे मूंखे, अहुखीअ मां उकारियो,
संओं मुंहुं करे, सुपिरीं ! अईं निर्मलु नूर निहारियो,
साइलनि जिअं सड़ करे, अईं तालहनि खे तारियो।

10. ऊँचा जितना नाम तेरा, मेहर भी माँगूं उतनी,
बिना थम्भे, बिना खम्भे, तू ही छप्पर, छाँव तू ही,
क्या कहूँ मैं ? है मालूम सब कुछ तुझे ही॥

11. बख़्श ज़िन्दगी, ज़िन्दगी बख़्श, दिल न ढाह मेरा,
दिलबर की याद ने, दोस्त की सलाह ने, बख़्शी नई ज़िन्दगी
बेबसों को,
इस प्यासे तन को, दिलबर ने ख़ूब पिलाया, रहमत के सागर से,
मर्ज़ मरीज़ों का, कर दूर नज़रे-इनायत से,
मेहर अपनी से मेहरबान ने, उबारा मुझे गहराइयों से,
आ सामने, दिलबर मेरे, नवाज़ मुझे नूरानी नज़र से,
देता आवाज़ सवालियों को जैसे, बदनसीबों को भी तार वैसे॥

कर्मकांड

1. पुछियोई जां दोस्तु, तां पासे करि परिहेज़ खे,
जनी डि॒ठो होतु, तनि दीन सभेई दूरि कया।

2. जां की जोगी॒ थिय्यु, ना त निरज़ा॒! वंउं निकिरी,
कोहु थो कन कपाईं, जां न सहीं सिय्यु?
भजु॒! पराहूं थिय्यु, मतां बि॒या लज़ा॒ईयें।

3. गोला जे गिराह जा, जूठा से जोगी॒,
फिटल से फोगी॒, जिनि शिकम सांढिया।

4. अंदरि रिला रिलियूं, ब॒हरि पटोला,
इन परि कापिड़ी, गड॒ह जा गोला।

शाह लतीफ़ के कलाम में शब्द की अंतर्मुख साधना पर ज़ोर दिया गया है। इसमें बहिर्मुखी कर्मकांड को परमात्मा से मिलाप के साधन के रूप में व्यर्थ माना है। शाह लतीफ़ ने जोगियों के बाहरी भेष पर तीखा व्यंग्य किया है और चेतावनी दी है कि दिखावटी क्रियाएँ करके वे असली जोगी को बदनाम न करें। हालाँकि रोज़ा रखना और नमाज़ पढ़ना शुभ कर्म हैं, लेकिन जिस कर्म से दिलबर का दीदार हो जाए वह तो कुछ और ही है, उसका तअल्लुक बाहरी क्रियाओं से क़तई नहीं है।

1. गर प्रीतम को है ढूँढ़ना, तो कर किनारा कर्मकांड से,
जिन किया दीदार दिलबर का, तिन दीन सभी दूर किए॥

2. या तो बन जा जोगी, नहीं तो छोड़ जोग, निर्लज्ज!
क्यों चिरवाये कान तू, जब चल न पाए तलवार की धार पर,
भाग! परे हट, कहीं बदनाम न हो जाएँ जोगी दूसरे॥

3. ग़ुलाम जो स्वाद का, वह जोगी है झूठा,
शौक जिसे लज़्ज़तों का, वह जोगी बेरस भूसा॥

4. फटी गुदड़ी अन्दर, बाहर से पटोला,
ऐसा भेषी जोगी, होता ग़ुलाम गधे का॥

5. नाथु जंहीं निंधि, तिति न निहारियो जोगिएं,
के कुवेसाहिया कापड़ी, पुरिया पराहें पंधि,
हू हिनहीं हंधि, थे हुंहईं विया हिंगिलाज डे।

6. नमाज़ ऐं रोज़ो ई पिण सखरु कमु,
ऊ को ब्यो फ़हमु, त पसिजे पिरींअ खे।

7. पट छडियाऊं पट में, डंड छडियाऊं डिसु,
आलाइशां अगे थिया, मोटी थियनि न मिसु,
हियु छडियाऊं हिसु, वञी कालह कुलु थिया।

5. जिस थाँह बसे साहिब, ढूँढ़े वहाँ न जोगी,
भटके दूर सफ़र पे, झूठे भेषी जोगी,
मौजूद वो यहीं, नाहक़ निकले हिंगलाज* को।

6. नमाज़ और रोज़ा भी है शुभ करम,
मगर है कोई और करनी वो, मिले जिससे दीदारे दिलबर।

7. फेंके कमण्डल जोगियों ने, फेंक दी सिंगियाँ,
मलीनता को छोड़ पीछे, फिर न होते वे मैले,
निकाल हवस हृदय से, हुए एक कुल-मालिक से॥

* बलोचिस्तान में एक पर्वत जो तीर्थस्थान के रूप में मशहूर है।

उपदेश

1. नमी खमी निहारि तूं, ड॒मरु ड॒ोलाओ,
थियई साञाओ, जे उभिएं इन्हीअ पेर ते।

2. अण चवंदनि म चउ, चवंदनि चयो विसारि,
अठई पहर अदब सें, परि इहाई पारि,
पायो मुंहुं मूननि में, ग़ुरबत साणु गुज़ारि,
मुफ़ती मंझि विहारि, त क़ाज़ीअ कांयारो न थिएं।

3. वखरु सो विहाइ, जो पए पुराणो न थिए,
वेचींदे विलात में, ज़रो थिए न ज़ाइ,
सा का हड़ हलाइ, आग॒हि जंहिंजे उबहीं।

4. ड॒ोरे लहु ड॒ातारु, जिम विहीं वेसिरो!
हकियो होइजि होशयारु, खिंवणि खिवंदियइ ओचिती।

शाह लतीफ़ के कलाम में जीवन को परमात्मा की सच्ची भक्ति द्वारा पाक बनाकर उससे मिलाप करने के लिए कई पहलुओं पर उपदेश दिया गया है। आप समझाते हैं कि क्रोध की जगह क्षमा का गुण धारण करना चाहिए, मन को दुखानेवाले वचन नहीं बोलने चाहिएँ, अपने अंतर में झाँकते हुए हमेशा सच का सौदा करना चाहिए। जो गफ़लत की नींद में बेज़ार है वह प्रभु प्रीतम को कैसे पा सकता है? इसलिये संसार से ध्यान हटाकर अंतर्मुख अभ्यास करें। रातों को जागकर प्रभु नाम की कमाई करें। यदि हृदय में प्रियतम से मिलाप की चाह है, तो मायावी बंधनों से ऊपर उठकर, मन को मारकर मालिक की रज़ा में रहें। ख़ुदी छोड़कर मन में नम्रता धारण करें।

1. क्रोध करे बेचैन, नम्रता क्षमा धारण कर,
पहचान होगी तब, गर पुख़्ता रहे इस बात पर॥

2. बोल न कुछ बेज़ुबाँ से, जो लड़ाए ज़ुबाँ उसे भूल तू,
रह अदब में आठों पहर, निभा इस रीति को तू,
झाँक अपने गिरेबाँ में, दीन-हीन हो गुज़ार तू,
रख ज़िंदा ज़मीर को, तो होगा न मोहताज काज़ी का॥

3. कर सौदा उस सच का, जो क़ायम रहे सदा,
पहुँच कर दरगाह में उसकी, हो सम्मान जिसका,
कर जमा पूँजी ऐसी, जो दिलाए निजात तुझे॥

4. बैठ न गफ़लत में, ढूँढ़कर पा ले दातार,
मौत कड़केगी अचानक, हर वक़्त रह होशियार॥

5. ओरारि न परारि, वेचारी वह विच में!
सुकीअ ड॒नीअ सुपिरीं, बि॒यो मिड़ोई तारि,
तूं घिड़ु, कीम निहारि, बु॒डं॒दनि सें बा॒झूं करे।

6. हारी! हक़्क़ु रखेजि, सांभारा साहड़ जो,
ख़्वाब, ख़ियाल, ख़तिरा, तिनि खे तरकु डि॒एजि,
अंदरु आईनो करे, परि में सो पसेजि,
इनहीअ राह रमेजि, त मुशाहिदो माणिएं।

7. ग़ाफ़िलि! ग़फ़िलत छोड़ि, तूं कीअं, अणासी! ओझिरीं?
चुपाता चड़ही विया, वञी पहुता तोड़ि,
नेणें निंड उखोड़ि, जिम वरनि में वाका करीं।

8. अखि उलिटी धारि, वंउ उलिटो आम सें,
जे लहिवारो लोकु वहे, तूं ऊचो वहु ओभारि,
मंझां नूच निहारि, पुरु पुठीरो पिरींअ डे॒।

9. अदियूं! वरु उघाड़, विहांउ जंहिं विसारियो,
जेडि॒यूं! छडे॒ जाड़, सभि नंगियूं थी निकिरो।

10. सभि नंगियूं थी निकिरो, लालचि छडे॒ लोभ,
सुपेरियां सें सोभ, निंडूं कंदे न थिए।

11. सभि नंगियूं थी निकिरो, परहण छडे॒ पोइ,
महंदि मिड़निआं होइ, कहे जा कीन खणी।

5. न आर, न पार, बेचारी बीच मँझधार,
चारों तरफ जल अपार, सूखे तट खड़ा दिलदार,
बढ़ आगे, न देख कहीं, वो पार लगाता डूबतों को॥

6. नादां! रख भरोसा, है साजन उस पार खड़ा,
तज दे अन्दर से, ख़्वाब, ख़याल, ख़तरा,
दिल को बना आईना, फिर देख रूप उसका,
चलें इस राह पर तो, मिले मौज दीदार की॥

7. ग़ाफ़िल! ग़फ़लत छोड़, बेहया! कैसे ले रही झपकियाँ?
गुप चुप जो चढ़ गए, जा पहुँचे मंज़िले-मक़सूद पे,
नैनों नींद उखाड़, कहीं बिलखना ना पड़े मौत की घाटी में॥

8. आँख उलट कर देख अन्दर, तू चल उलट दुनिया से,
लोग बहें धार संग, तू तैर उलटी धार,
देख अन्दर टिका नज़र, पलटकर चल पीछे प्रीतम के॥

9. बहिनो! मुबारक हैं वो, जिन्होंने तज दिया सिंगार,
सखियो! छोड़ो ग़फ़लत, निकलो सब तज लोक लाज॥

10. निकलो सब, तज लोक लाज, लोभ लालच छोड़ के,
मुमकिन नहीं प्रीतम का पाना, ग़फ़लत की नींद में॥

11. निकलो सब, तज लोक लाज, चलो बेधड़क होके,
चली जो 'कुछ न' लेकर, पहुँची वो सबसे अव्वल॥

12. कहे जा कीन खणी, पिरींअ पहुती सा,
विहे वेड़िहिजी जा, वस्लु तंहिं विञाइयो।

13. लैल न जाग़ीअं लिख सीअं, कुल्ली नौमु कयाइ,
क़ुम् थी, पहुचु क़रीब खे, इज्लिस् तो न जुग़ाइ,
मुठी! महिमाननि सें, वेही राति विहाइ,
जेलां निंड कयाइ, ते रोज़ु रहीं थी राह में।

14. हीअ हड़ि विहाणी, जां कतीं तां कितु,
को पंहिंजी ईद खे, भेरे कजि भरतु,
मतां रोईं रतु, सुबाह विचि सरतीयें।

15. सुतो किअं निंडूं करीं, रो विहाणीअ रोइ,
सुभां साज़ु संदोइ, पियो हूंदो पट में।

16. अज़ु पिणु उझण खे मरीं, नकी कितुइ काल,
मूना उठजी उखड़िया, अरट ढरिकी माल,
हइ! तनीं जे हाल, जनि कापे मंझां कीन कयो।

17. मङु तिन्हीं खां, मङणा! जो ड़ीहाड़ी थो ड़िए,
कूड़ा दर दुनिया जा, जाजिक! मङी जे,
सुभां तोहीं खे, मोटी ड़ींदा मुंहं में।

12. चली जो 'कुछ न' लेकर, पहुँची पिया के पास,
जो बैठी करे सिंगार, वो गँवाए मौका मिलाप का॥

13. जागी तू न ज़रा, रही सोती सारी रात,
है न मुनासिब काहिली, उठ पहुँच पिया के पास,
अभागिन! महबूब के संग, बैठ गुज़ार रात,
जो तू रही सोती, तो भटकेगी हरदम राह में॥

14. बेला यह बीत जाएगी, जब तक कात सके, ले कात,
चला चरखा*, कर क़सीदा, कर तैयार ईद का तोहफ़ा,
कहीं कल बीच सखियों के, बहाने ना पड़ें आँसू ख़ून के तुझे॥

15. कैसे सोया ग़फ़लत में, रोकर रात गुज़ार,
नाकारा साज़† तेरा, कल पड़ा होगा ज़मीं पर॥

16. कल भी न काता सूत, ले रही झपकियाँ आज भी,
उखड़ गई काठी चरखे की, पड़ गई ढीली डोर भी,
हाय! अफ़सोस उनके हाल पे, जिन कुछ न पाया कात कर॥

17. माँग उसी से मँगते! जो हर दिन दे रहा,
दर झूठे दुनिया के, याचक! जहाँ तू माँग रहा,
कल ये ही पलटकर, देंगे ताने तुझे मुँह पर॥

---

* अर्थात् निरंतर सिमरन † शरीर

18. जे भांईं जोगी थियां, त सङ सभेई छिनु,
वञी दरि दोसतनि जे, नांगा! कीम निनु,
पटि तिनीं जी पिनु, जिनि बुझी न बुझियो।

19. जे भांईं जोगी थियां, त सङ सभेई टोड़ि,
जे जावा न जापंदा, जिय्यु तनीं से जोड़ि,
त तूं पहुचीं तोड़ि, मुहब्बत जे मैदान में।

20. जे भांईं जोगी थियां, त मनु पूरे, मंझि मारि,
दाइमु दूंहीं दिलि में, मन सें मालिहा वारि,
सहु सभका आरि, आगे जी अदब सें।

21. जे भांईं जोगी थियां, त कीन पियालो पिय्यु,
नाहि निहारे हथि करे, 'आऊं' से उति न भिय्यु,
त संदो वह्दत विय्यु, तालिब! तोड़ां माणिएं।

22. सिकीं कुह सलाम खे, करीं कुह न सलामु?
बिया दर तनि हरामु, इयु दरु जनीं देखियो।

23. जे ततो तनु तनूर जिअं, त छंडे साणु छमाइ,
आणे आगि अदब जी, बारे जानि जलाइ,
बुरक़आं अंदरि बाज़ियूं, पंहिंजूं सभु पचाइ,
लुछणु लवुं, लतीफ़ु चए, पधरि हडि म पाइ,
मतां लोक लखाइ, विसालां विचु पए!

18. गर चाह है जोग की, तो छिन्न* कर सब नाते,
दोस्त के दर जाके, न कर शिकवे-शिकायतें,
माँग भीख उसके दर पे, जो बूझे, पर न बुझाये॥

19. गर चाह है जोग की, तो नाते सारे तोड़,
जनम-मरण दोउ में नाहीं, लिव तिन्हीं से जोड़,
तो पहुँचे मुहब्बत के मैदान में, जो है मंज़िल तेरी॥

20. गर चाह है जोग की, मारकर मन, गाड़ अन्दर,
फेर माला मन की, रमा धूनी सदा दिल भीतर,
जो रज़ा मालिक की, अदब से क़बूल कर॥

21. गर चाह है जोग की, तो पी प्याला बेख़ुदी का,
कर दीनता धारण, ख़ुदी लेकर न हो खड़ा,
हो एकाकार उस एक से, खोजी! तो मिले मौज मंज़िल की॥

22. क्यों तरसे उसके सलाम को, क्यों न जा ख़ुद करता सजदा उसे?
हराम दर दूसरे उनके लिए, जिन कर लिया सजदा उस दर पे॥

23. जब तन तपे तंदूर जैसे, तो छिड़क पानी सबूरी का,
लाकर आग अदब की, दे फूँक अपनी हस्ती को,
डाल पर्दा, कर जज़्ब, रूहानी पहुँच अपनी,
कहे लतीफ़, हरगिज़ न करना ज़ाहिर, तड़प और लगन अपनी,
दुनिया के जान लेने से, कहीं बढ़ न जाएँ दूरियाँ विसाल की॥

* तोड़ दे

24. सूफ़ी चाईं सध करीं! सूफ़ियुनि इय न सलाह,
काटे रखु कुलाह, विझु उछिले आगि में।

25. जे कुलाह रखीं कंध ते, त सूफ़ी सालिमु थीउ,
विहु वटी हथि करे, पुरि पियालो पीउ,
हंधु तनीं जो हीउ, जनि हासुलु कयो हाल खे।

26. अखरु पढ़हु अलिफ़ जो, वरक़ सभि विसारि,
अंदरु तूं उजारि, पना पढ़हंदें केतिरा?

27. चुप करि, चप म चोरि, बूट अखियूं, ढकि कन,
पाणी पी पेटु म भरि, रहु अधूरो अन्न,
त हूअ जा मूरत मंझारा मन, तंहिं जो मुशाहिदो माणिएं।

24. सूफ़ी कहलाने का दावा है करता, तो फूँक दे ख़्वाहिशों को,
वरना उतार और फाड़ दे कुलाह*, झोंक दे उसे आग में॥

25. गर रखता है सिर पर सूफ़ियों का ताज†, तो बन सच्चा सूफ़ी,
हाथ में ले ज़हर‡ का प्याला, चुस्कियाँ भर-भर के पी,
है राह यह उनके लिए, जो हुए फ़ना मस्ती में॥

26. एक अलिफ़, नाम अल्लाह का कर याद, बाकी पन्ने सब विसार,
पन्ने पलटने बन्द कर, दिल का हुजरा साफ़ कर॥

27. आँख, कान, मुँह बंद कर ले,
अन्न जल उतना ले, जिससे चले शरीर,
तो होगा दीदार उसका, जो बस रहा अन्दर तेरे॥

* सूफ़ियों की टोपी † कुलाह, टोपी ‡ भाव सब्र, धीरज

विविध

1. सो पखी, सो पिञिरो, सो सरु सोई हंजु,
पेही जां परूड़ियो, मूं पांहिंजों मंझु,
ड॒ील जहिंजो ड॒ंझु, सो मारी थो मंझि फिरे।

2. जोग॒ी हुवनि न जिअरा, पाए जोगु॒ म जिय्यु,
हारिया! हिनि कननि सें, सुणु सनीहो इय्यु,
"विञाए वुजूद खे, पाणां पासे थिय्यु",
हड॒हीं कोन्हे हिय्यु, असारा! 'आऊं' चवीं!

3. से तो वेही विञाइया, जे कतण संदा ड॒ींहं,
अरट ओडी न थिएं, भोरी! भोरे सीअं,
कंधु खणंदीअं कीअं, अडणि अजीबन जे?

शाह साहिब के कलाम में संत-महात्माओं द्वारा दिये गए पैग़ाम के कई पहलुओं का सुंदर चित्रण है। ज़िंदगी का असली मक़सद समझाने के लिये उन्होंने उस समय के लोगों की रोज़मर्रा से जुड़ी मिसालें दी हैं जैसे – मनुष्य जन्म का क़ीमती समय गँवाने के बजाय नामरूपी सूत कातने की प्रेरणा देना। जिसने दिलरूपी चरखे से नामरूपी सूत को मुहब्बत से काता, उसकी भक्ति का सूत क़बूल हुआ। आदत से मजबूर मनरूपी ऊँट चंदन की तरफ़ न जाकर आक और लाणी ही चरता है। जो आत्मा प्रियतम प्रभु के संग का आनंद लेने के बजाय मन के संग ही खेल रही है, वह तो बढ़िया दाना छोड़कर भूसा ही चुन रही है। अपने अंतर में निर्मलता लाने के लिये दिलबर की मुहब्बत की आग में तपना ज़रूरी है। कोई विरला भाग्यशील जीव ही दिलबर की राह पर क़दम रखता है।

1. वही पंछी, वही पिंजरा, वही हंस, वही सरवर,
मालूम हुआ ये राज़ सब, जब झाँका अपने अन्दर,
डर था जिसका घट में मुझे, वो शिकारी है मेरे अन्तर॥

2. जोगी जीते-जी मरे, मर कर जोग कमाए,
मूरख! सुन यह सन्देश, ध्यान देकर इन कानों से,
मिटा दे अपनी हस्ती को, कर किनारा ख़ुदी से,
जीव की हस्ती न कोई, ग़ाफ़िल फिर भी तू 'मैं मैं' करे!

3. तूने बैठ गँवाए, जो दिन थे कातने के,
पल भर भी नादान, पास न आई चरखे के,
क्या मुँह लेके जाएगी, पिया के आँगन में?

4. का हिंएं सें लाइ, भोरी! का हिंएं सें लाइ,
तुंबाए ताकीद सें, जनि पिञायो पाउ,
लसी तंदु, लतीफ़ु चए, हली तनि हथाउ,
पहियूं तुहिंजूं झिरकनि झोरियूं, बियूं उड़ायूं वाअ,
अरट पासे ओझिरीं, तोखे सुमहण आइयो साउ,
आधीअ, अब्दुललतीफ़ु चए, रोई रीझाइजि राउ।

5. वर सें विझियो काणि, खर सें खिलणु पाइयें,
भोरी मुंध अञाणि, कण छड़ियो तुह मेड़िएं।

6. फिरया पसी फीणु, खरियनि खीरु न चखियो,
दुनियां कारणि दीनु, विञाए विलहा थिया।

7. भेरिएं ऐं भांइयें, इअं विड़ूणो कांधु,
वेठी ओरि अरट सें, गिचीअ पायो पांदु,
त तुंहिंजो ई विणवांदु, कितो वितो न थिए।

8. चांगा! चंदनु न चरीं मया! पिएं न मोक,
अगर ओड़ो न वञीं, थुकियो छड़िएं थोक,
लाणी विचां लोक, तो कहिड़े अखरि आउड़ी?

9. सोन सारीका हथड़ा, कोहु न कतीं रड़ि?
वेही कुंड, कापो करि, घुतूं गोहियूं छड़ि,
त सराफ़ाणी सड़ि, मरकियो हूंदि मटाईयें।

4. उर अंतर धार, नादान! कुछ उर अंतर धार,
ध्यान से धुनकर, जिन सूत काता पाव भर,
बारीक सूत उनका, कहे लतीफ़, हुआ मंजूर,
ऊँघ रही चरखे के पास, तुझे नींद में रस आया,
कुछ चिड़ियों ने बिगाड़ा, कुछ हवा ने उड़ाया,
कहे अब्दुललतीफ़ उठ आधी रात, रो-रोकर रब मना॥

5. पिया से निभाई नहीं, पराए संग हँस खेल रही,
नादान! अयानी औरत, दाना छोड़ भूसा बटोर रही॥

6. देख झाग हुए फ़िदा, मूर्ख चखें न क्षीर,
दुनिया कारण दीन गँवाया, और हुए कंगाल॥

7. ऐ गुमराह! तेरी ख़ुदी से रूठ जाएगा भरतार,
डाल दामन गले में, कर चरखे से फ़रियाद,
ऐबदार कताई भी तेरी, नहीं जाएगी बेकार॥

8. ऊँट! ना तू चंदन चरता, मूर्ख! ना पीता बहता पानी,
ना फटकता अगर* के पास, थूक देता चीज़ लासानी,
आख़िर इस दुनिया में, भाती क्यों तुझे लाणी†?

9. सोने जैसे हाथ तेरे, ज़िद्दी! क्यों न कातती तू?
छोड़ बहाने, बैठ कोने में, मत कर टालमटोल,
तो सर्राफ़ के बुलावे का, देगी जवाब शान से॥

* सुगंधित शाखाओं वाला पेड़ (एक किस्म का पेड़ जिसकी लकड़ी ख़ुशबूदार होती है)
† घास की एक किस्म जो अकसर ऊँट खाता है

10. चाउति पाए चित में, सन्हो कितो जनि,
तिनि जो सराफ़नि, दुको दाख़िलि न कयो।

11. मुहब्बत पाए मन में, रंढा रोड़िया जनि,
तिनि जो सराफ़नि, अण तोरियो ई अघाइयो।

12. को जो वहु कापाइतियनि, कंबनि ऐं कतनि,
कारणि सूद सवारियूं, आतणं मंझि अचनि,
उनि जीअ सूंहं, सय्यदु चए, सराफ़ ई सिकनि,
अघिया सुट संदनि, पाए तराज़ीअ न तोरिया।

13. पाछाही न पाड़ियां, सरितियूं! सुईअ साणु,
ढके उघाड़नि खे, कीन ढकियाईं पाणु!
बीहर जापी जाणु, इब्र जे ओसाफ़ खे!

14. कुपेरीअ में पेरु, कनहीं पातो पेरियें,
जियां मुंझण माडुहिएं, सजण तियां ई सेरु,
उन भूं संदो भेरु, कोड़िनि मंझां को लहे।

15. वरु सा सुञी वेड़हि, जंहिं में सजणु हेकिड़ो,
सो मागु ई फेरि, जिते कोड़ि कुमाडुहिएं।

10. रख हिर्स हवस मन में, काता जो सूत महीन,
किया न क़बूल रत्तीभर ही, सूत उनका सर्राफ़ ने॥

11. दिल में लिए मुहब्बत, काता जो सूत ख़ुरदरा,
किया क़बूल अनतोले, सूत उनका सर्राफ़ ने॥

12. देख! इश्क़ कापाइतियों* का, काँपें और कातें,
सुबह-सवेरे, त्रिंजण† में आतीं, बख़्शिश पाने के लिए,
उनके उम्दा सूत पर, सैय्यद कहे, है सर्राफ़‡ भी फ़िदा,
क़बूल हुआ सूत उनका, तराज़ू में तोले बिना॥

13. सखियो! सुई बराबर, मानूँ न बादशाहियाँ,
ख़ुद को न ढके वो, ढकती उघाड़ों को!
जीते-जी मरकर जी, फिर जान, गुण ये सुई का॥

14. रखे क़दम विरला कोई, उस अनजान राह पर,
चलते हुए अटके जहाँ, दिलबर दिखाता राह वहाँ,
करोड़ों में पाता कोई, उस राह का निशाँ॥

15. भला वो वीरान बियाबान, जहाँ बसे साजन मेरा,
वो राह ही बदल डाल, जहाँ बसें साकत करोड़॥

* सूत कातनेवाली की पहचान करनेवाला
† जहाँ स्त्रियाँ इकट्ठी बैठकर सूत कातती हैं
‡ अच्छे और बुरे

16. खाहोड़ी खरा, सूधी ख़बर पखिया,
सोझे जनि कया, मथे अङणि आहिरा।

17. मंझि मुहबत मचु, ब॒हर धूधा धूड़ि सें,
छड॒ियाऊं चुर लही, कूड़ु, कुलखणु, कचु,
अवगुण ओड॒ा न थिया, गु॒णु कयाऊं ग॒चु,
जिअं सड़नि, तिअं सचु, जिअं सड़नि, तिअं सनरा।

18. नामुरादी निझुरो, अदमु ओतारोनि,
रज़ा राजु॒ संदोनि, मूरु न मङनि की ब॒ियो।

19. यादि गुरू कनि गोदड़िया, भरि बाज़ारि बीठा,
पड़हनि सूर सुबहान जी, पियनि तंहिं पीठा,
जेलां मुंहं मीठा, तेलां नशा चाड़िहयाऊं नींहं जा।

20. पूज॒ा कारि म पाण खे, खोइ, रावल! ब॒नि रुजातु,
लिबासां, लतीफ़ु चए, पलि वैराग॒ी! वातु,
मनु मारे करि मातु, त तीरथ पसीं तकियो।

21. सिङियूं, सेलियूं, गबरियूं, टेई टोल टग॒ो,
पटु हणी पट सें, भेरे तिनि भगो,
लाहूतु जिनि लगो, से मड़िह्यां मूरु न निङिया।

16. मौजूद हैं आज भी फ़कीर, जो ताक़ते-परवाज़* रखते हैं,
जा पहुँचें ला-मकाँ† में, करें बसेरा वहाँ॥

17. अन्दर भभकती आग मुहब्बत की, बाहर धूल और धुआँ,
पाकर राह अन्दर, छोड़ा कूड़, कच्च, कपट,
पास न फटकें अवगुण, हो गए गुणवन्त,
जितना तपें, हों निर्मल उतने, जितना तपें, हों उतने रोशन॥

18. रह रहे थे नामुरादी के मुक़ाम में, बैठक है असली ला-मकाँ में,
नामुराद‡ से बेमुराद§ हुए, हरगिज़ न माँगें और कुछ॥

19. खड़े दुनिया के बाज़ार¶ में, फ़क़ीर ग़लतान गुरु की याद में,
क़र्ज़ कर्मों का अदा करते हुए, सिमरें नाम ख़ुदा का,
जितने होते ग़र्क़ इलाही-इश्क़ में, आती आजिज़ी उतनी॥

20. पूजा करा न अपनी, रावल! कर किनारा भीड़ से,
कहे लतीफ़, ऐ वैरागी! छोड़ भेख, कपट, थिर कर वचन अपने,
जूझकर दे मात मन को, पहुँच तीरथ, कर दीदार दिलबर का॥

21. सिङी, रस्सी, गोदड़ी**, त्याग दीं तीनों,
पटका कमंडल ज़मीं पर, कर दिया टुकड़े-टुकड़े,
जिन लगी लिव लाहूत की, हरगिज़ न छोड़ें हुजरा अपना॥

---

* ख़ुदा की दरगाह की तरफ़ उड़ने की शक्ति † आख़िरी रूहानी मंज़िल, परमधाम
‡ अभागा § इच्छारहित ¶ भाव शोरगुल ** योगियों की ओढ़नी, कंथा

22. खोइ गोदड़! बनि गबरियूं! नेई खिदाऊं खांइ,
जेडांहीं जोगु वियो, नेण तेडांहीं नांइ,
भुणो ईअं भांइ, त सिडियूं शूमत हथ जूं।

23. जा गुर डिनी गोदिड़ी, सा मूं खे थी मरकु,
चेला! मारे चरख़ु, ओढे वेहु अदब सें।

24. जा गुर डिनी गोदिड़ी, सा थिए लाहींदे लज,
संदा तंहिं सुहज, चेलो चवंदो केतिरा?

25. जा गुर डिनी गोदिड़ी, सा मूं घणी सुहाइ,
नेई रसाणे माइ, ओढिएं जे अदब सें।

26. जिअणा अगे जे जिआ, जुगि जुगि से जिअन,
ओइ मोटी कीन मरनि, मरणां अगे जे मुआ।

27. मरणां अगे जे मुआ, से मरी थियनि न मातु,
हूंदा से हयातु, जिअणां अगे जे जिआ।

28. जिते अर्शु न उभु को, ज़मीन नाहि ज़रो,
न को चाड्हाओ चंड जो, न को सिज सरो,
उते आदेसियुनि जो, लगो दंग दरो,
परे पियुनि परो, नाथ डिठाऊँ नाहि में।

22. उतार, फेंक गड्ढे में गोदड़ी, लिहाफ़ को दे जला,
है सच्चा जोग जहाँ, ध्यान वहीं टिका,
करती हैं हाथ मैले सिडियाँ, जोगी समझ यह बात ज़रा॥

23. मुर्शिद की बख़्शी गोदड़ी*, है वो फ़ख़्र मेरा,
अदब से ओढ़कर, मुरीद! लगा ले आसन॥

24. मुर्शिद की बख़्शी गोदड़ी, उतार देना है शर्मनाक,
गुण उसके बेशुमार, मुरीद कैसे करे बखान॥

25. मुर्शिद की बख़्शी गोदड़ी, मुझ पर ख़ूब सुहाए,
अदब से ओढ़ूँ अगर, देगी मंज़िल पर पहुँचाए॥

26. वे हो गए अमर, जो ज़िन्दगी में जी उठे,
वे न मरते बार-बार, जो जीते-जी मर गए॥

27. मरने से पहले जो मरें, मर कर भी ज़िन्दा रहें,
हो जाते वे अमर, जो जीते-जी ही जी गए॥

28. न कोई आसमाँ वहाँ, न ज़मीन का निशाँ,
न चाँद का उभरना, न सूरज का निकलना,
योगियों ने डाला पड़ाव, उस वादी की हद पर,
पार देखा तो ख़बर लगी, हुए फ़ना मालिक के दीदार में॥

* गुरु द्वारा दी गई नाम की ओढ़नी

29. हिकी ब॒ान्हे चित में, ब॒ी सिटी साहिबु,
कढे ऊन्हे कुन मां, ई आगे जो अजबु,
इयु साईंअ जो सबबु, जिअं ब॒ुड॒ा उकारे ब॒ारि मां।

30. सूफ़ी लाकूफ़ी, कोन भांएसि केरु,
मंझियां ई मंझि विड्हे, पधर नाहिसि पेरु,
जनीं साणुसि वेरु, थिए तनीं जो वाहरू।

31. उथियारे उथी विया, मंझां मूं आज़ार,
हबीब ई हणी विया, पीड़ा जी पचार,
तबीबनि तंवार, हड॒ि न वणे हाणि मूं।

29. एक है बन्दे के मन में, कुछ और चाहे साहिब,
ये आदि पुरुष का अजब, निकाले गहरे भँवर से,
साहिब तेरे वसीले, डूबते उभरे बाढ़ से॥

30. सूफ़ी होते ला-ताल्लुक मज़हबों से, कोई न पहचाने उन्हें,
करें नफ़्स से जद्दोजहद, पर करते न ज़ाहिर ज़रा,
जो करें दुश्मनी उन से, होते उन्हीं के मददगार॥

31. जगाकर दर्दे-इश्क़ दिल में, उठकर चले गए,
देकर ग़म जुदाई का, दिलबर चले गए,
तबीबों की तजवीज़, भाए न अब हरगिज़ मुझे॥

सचल सरमस्त

जीवन परिचय

सचल सरमस्त का जन्म 1739 ई. में दराज़ गाँव में हुआ। यह गाँव पाकिस्तान में उत्तरी सिंध की ख़ैरपुर रियासत में है। आपका बचपन का नाम अब्दुल वहाब था। 'सचल' और 'सचु' उनके उपनाम थे। क्योंकि वे ज़्यादातर रूहानी मस्ती में डूबे रहते थे, इसलिये उनके शिष्य उन्हें 'सचल सरमस्त' कहा करते थे। आम लोग भी उन्हें 'सरमस्त' कहने लगे। 'सरमस्त' का अर्थ है मस्त। सचल साहिब की वंशावली मुहम्मद साहिब के दूसरे ख़लीफ़ा* उमर फ़ारूक़ से चली आ रही है। ख़लीफ़ा उमर के वंशज सिंध में आकर बस गए थे।

कहा जाता है कि सचल के दादा मियाँ साहिबड़िनो उच्च कोटि के दरवेश थे। सिंध में आने के बाद उन्होंने कुछ समय तक मीरों के यहाँ नौकरी की। वे ख़ुदापरस्त तो थे ही, इसलिये बाद में उन्होंने संन्यास ले लिया। वे थार की काँटेदार झाड़ियों में छिपकर इबादत किया करते थे। एक बार अकस्मात् आपकी मुलाक़ात शाह लतीफ़ साहिब से हुई। शाह लतीफ़ ने उन्हें सलाह दी कि वे गुमनामी से बाहर आएँ और लोगों को रूहानियत का पैग़ाम दें।

सचल साहिब अभी नाबालिग़ ही थे कि उनके पिता चल बसे। इसलिये उनका पालन-पोषण उनके चाचा फ़क़ीर अब्दुल हक़ की देखरेख में हुआ। फ़क़ीर अब्दुल हक़ ने उन्हें बैअत किया, उनके मुर्शिद बने और अपनी बेटी से उनका रिश्ता जोड़कर उनके ससुर भी बने। सचल साहिब की पत्नी शादी के दो साल बाद ही परलोक सिधार गयी। उसके बाद सचल साहिब ने

---

* उत्तराधिकारी, जानशीन

दोबारा शादी नहीं की। अपने मुर्शिद फ़क़ीर अब्दुल हक़ की महिमा में आप लिखते हैं :

मेरा हादी अब्दुल हक़ हुआ,
नहीं अब्द हुआ है हक़-उल-हक़।

यानी मेरा मुर्शिद अब्दुल हक़ है। वह ख़ुदा का अब्द* नहीं, वह तो ख़ुद हक़ है, सत्य है।

जब सचल की उम्र 13 वर्ष की थी, शाह लतीफ़ दराज़ में पधारे। सचल को देखते ही उनके मुख से यह वाक्य निकला:

असाँ जेको देगड़ो चाढ़ियो आहे, तहिंजो ढक ही नींगर लाहिंदो।
हमने जो देग चढ़ाई है उसका ढक्कन यह बालक उठाएगा।

उस वक़्त उनके दादा साहिबडिनो और चाचा अब्दुल हक़ भी वहाँ मौजूद थे।

शाह लतीफ़ का यह कथन आगे चलकर सच साबित हुआ। जिस रूहानी भेद को शाह लतीफ़ ने पोशीदा (परदे में) रखा, सचल ने उसका खुलकर इज़हार किया। उन्होंने भक्ति का दिखावा करनेवालों की खुले आम आलोचना की और खरी-खोटी सुनाने में कोई कसर नहीं रखी।

यूसुफ़, बेदिल, शादी ख़ान, मीर अली और मुराद ख़ान आदि सचल के ख़ास मुरीद थे। इनके मुरीद यूसुफ़ ने अमृतसर में स्वर्ण मंदिर के दर्शन किये और गुरु साहिबान की वाणी से इतना प्रभावित हुए कि उन्होंने अपना नाम यूसुफ़ नानक रख लिया। सचल ने यूसुफ़ नानक को अपनी रूहानी दौलत का उत्तराधिकारी नियुक्त किया। सचल सरमस्त को अपने गाँव दराज़ से इतना प्यार था कि वे सारी उम्र अपने गाँव से दूर नहीं गए। उनका देहांत 1829 ई. में 90 वर्ष की उम्र में हुआ। देह त्यागने से पहले तीन दिन तक वे अपनी कोठरी से बाहर नहीं निकले। रमज़ान के चौदहवें दिन उन्होंने देह त्याग दी।

* दास, बंदा

सचल सरमस्त हमेशा ज़मीन पर ही बैठते और सोने के लिये लकड़ी का तख़्त इस्तेमाल करते थे। वे भोजन सादा और कम मात्रा में करते थे। वे शाकाहारी थे और ज़्यादातर दाल और दही पर निर्भर रहते थे*। आपका पहनावा बिल्कुल सादा था, यहाँ तक कि आपकी ज़िंदगी का हर पहलू सादगी की मिसाल था, लेकिन चिंतन के हर पहलू में रूहानियत थी।

आप प्रेम की साक्षात् मूरत थे। आपके कलाम के हर पहलू में प्रेम की झलक है। आपने परमात्मा को भी प्रेम का ही स्वरूप सिद्ध किया है और कहा है कि ख़ुदा से बेहद इश्क़ करनेवाले आशिक़ का तो ख़ुदा भी आशिक़ हो जाता है। जब मुरीद को अपने मुर्शिद की शरण हासिल हो जाती है और मुरीद उनके उपदेश पर अमल करता है, तो उसे माया के बंधनों से छुटकारा मिल जाता है और वह प्रभु से मिलाप करने के योग्य हो जाता है।

सचल साहिब उच्च कोटि के विद्वान् थे। उन्हें क़ुरान ज़ुबानी याद था। सचल को शायर-ए-हफ़्त ज़बाँ यानी सात भाषाओं का शायर कहा जाता है। उन्होंने सिंधी, हिंदी, उर्दू, सराइकी, पंजाबी, फ़ारसी और अरबी भाषा से अपने कलाम को सँवारा-सजाया। सारंगी और तबले के बजते ही वे वज्द† में चले जाते। फिर तो कलाम उनकी ज़ुबाने-मुबारक से यूँ बहता था, जैसे निर्मल वर्षा की धाराएँ। वहाँ बैठे लेखक एकदम अपनी क़लमें चलाते और कलाम के मोतियों की माला पिरो लेते।

हालाँकि उनके कलाम में रूहानियत के हर पहलू का वर्णन है, फिर भी उन्होंने रूहानियत का सार तत्त्व यही सिद्ध किया है कि यदि आशिक़ उस ख़ुदा के इश्क़ में अपनी हस्ती को नेस्तोनाबूद कर दे, तो वह ख़ुदा का ही रूप हो जाता है।

* http://www.freesindh.org/sindhhistory/Shah_Sachal_and_Swami.htm/
† आनंद में आत्मविस्मृति

वहदत

1. अल्लाहु जाणु न उनखे, ही मिड़ियोई हक़ु,
नाहे सचल शकु, जो मालूमु थियो मुर्शिद खां।

2. सचल सारो सचु थियो, मंझां कसिरत कुलु,
अलिफ़* मां आदमु थियो, करे हंगामो हुलु,
हिंदू मोमिनु हिकु थियो, भोल न बिए कंहिं भुलु,
थिजि गुलाबी गुलु, मरु मारीनी मंसूर जां।

3. पाणु पंहिंजो पाणही, सूरत मंझि सुञाणु,
अल्लहु अल्लहु छो चवीं, पाण ई अल्लहु जाणु,
तूं ई बुधंदड़ु, तूं ई डिसंदड़ु, शाहिदु आहे क़ुरानु,
नाहे शकु गुमानु, सचू साईं हेकिड़ो।

* सूफ़ी मत में 'अलिफ़' अल्लाह के अर्थ में प्रयुक्त हुआ है

अन्य सूफ़ी संतों की तरह सचल साहिब ने भी अपने कलाम में वहदत पर बहुत ज़ोर दिया है। वहदत का अर्थ है एकता अर्थात् अद्वैत, परमात्मा एक ही है, और वहदतुलवुजूद का अर्थ है अस्तित्व की एकता अर्थात् 'एक ही है, सिर्फ़ भगवान् ही है।' नीचे दिये जा रहे कलाम में यह बात बड़े स्पष्ट और सुन्दर ढंग से कही गई है। अद्वैतवाद में भी समस्त विश्व परम चेतन परमात्मा का ही प्रकट रूप है – परमात्मा सत्य है, सर्वव्यापक है।

सिंधी कलाम की तरह आप सराइकी कलाम* में भी ख़ुदा के एक होने का ज़िक्र करते हैं और साथ ही यह भी कहते हैं कि असल सिर्फ़ ख़ुदा ही है, उसके सिवा और कुछ नहीं है। उसी ने संसार में सब रूप धारण कर रखे हैं – 'मंसूर भी तू, जल्लाद भी तू' अर्थात् सूली पर चढ़नेवाला मंसूर भी तू है और सूली चढ़ानेवाला जल्लाद भी तू है।

1. और किसी को मान न अल्लाह, वह तो एक ही है जो सच है।
सचल कहे, जाना मुर्शिद से, रहा मुझे ना अब कोई शक है॥

2. शक्लें बहुत-सी, सब उस एक की, सच साबित हुआ यह राज़, सचल।
आदमी एक ही रब से पैदा, फिर भी झगड़ा, शोरोगुल॥
बना वही एक हिन्दू, मुस्लिम, अब ना किसी भी भ्रम में रहना।
मारे जो मंसूर की मौत भी, फूल गुलाब का बना तू रहना॥

3. अपने जिस्म के अन्दर ही तू अपने आप की कर पहचान।
'अल्लाह! अल्लाह!' क्यों पुकारता? ख़ुद को ही अल्लाह तू जान॥
तू ही देखे, सुने भी तू ही, है इस बात का गवाह क़ुरान।
सचल कहे, मुझे शक नहीं कोई, एक ही है, सिर्फ़ है भगवान्॥

* सिंध की एक उपभाषा

4. सचू साईं हेकिड़ो, नाहे शकु गुमानु,
पंहिंजो तमाशो पाण डिसे थो, सूरत मंझि सुल्तानु,
काथे पढ़े पोथियूं, काथे पढ़े क़ुरानु,
काथे ईसा, काथे अहमद, काथे हनूमानु,
हैरत में हैरानु, पंहिंजो विधाईं पाण खे।

5. ज़ाति सिफ़ति हिकाई आहे, भोल न विझीं भोले,
सोई अंदरि, सोई बाहिरि, सोई तुंहिंजे चोले,
तो में, मूं में, हुन में हरि जा, सचू सचु थो बोले।

6. पाणा पाण कयोसीं बेशकि, हरि सूरत सैलानी,
सभका सूरत मुंहिंजी आहे, आहियां लामकानी,
कुफ़्रु रहियो नको इस्लामु रहियो, लथी राह हैरानी,
सचल नामु थियो गुमु, बाक़ी रहियो सिर्रु सुबहानी।

7. पाए जामो जमीअत जो, आयो मंझि जहान,
जुज़े जाइ हिति कई, डिसु फ़ाइक़ जा फ़र्मान,
जेकी डिसीं डेह में, सो अथी मंझि इन्सान,
निसोरा नीशान, सचल सभ सरीर में।

8. छा जो शकु गुमानु, सभिका सूरत तुंहिंजी,
मतां करीं अरमानु, ग़हिला! इन्हीअ ग़ाल्हि जो।

9. जेकी आहे हिति, हुति भी उहोई अथई,
भञु इहाई भिति, तां तूं उहोई आहीं।

4. दावे से है सचल यह कहता, सिर्फ़ ख़ुदा ही है, नहीं शक है।
कायनात* है उसी की सूरत, खेल देखता ख़ुद मालिक है॥
पढ़ता कहीं धर्म ग्रंथ वह, और कहीं पढ़ रहा क़ुरान।
कहीं वह ईसा बनकर आया, कहीं मुहम्मद, कहीं हनुमान्।
अनेक रूप धारण कर-करके ख़ुद को ही करता हैरान॥

5. सबकी ज़ात, ख़ासियतें एक ही, पड़े न रहना तुम किसी भ्रम में।
वही है अन्दर, वही है बाहर, वही एक तुम सबके तन में।
वही है तुममें, मुझमें, उसमें, कहे सचल सच, वही है सबमें॥

6. खुद ही अपनी शक्लें बनाईं, हर शक्ल में सैलानी हूँ मैं।
मेरी ही हैं शक्लें ये सब, मैं लामकान†, चाहे सब में मैं॥
ना मैं काफ़िर रहा, ना मुस्लिम, राह की न रही परेशानी है।
नहीं रहा सचल, हो गया ख़ुदा, कैसे? यह राज़ ही बाक़ी है॥

7. देखो, यहाँ जहान में आकर जिस्म जो धारण किये हैं उसने।
उन सभी में जुज़‡ है उसका, रचे गए हैं हुक्म से उसके॥
दिखता है कायनात में जो कुछ, वह सब है इनसान के अन्दर।
सचल कहे, पर दिखता है उसका सिर्फ़ निशान ही तन के अन्दर॥

8. कैसा भ्रम? और शक़ भी कैसा? शक्लें ये तुम्हारी ही हैं सभी।
ऐ नादान! इन बातों को ले रखना अरमान न कोई कभी॥

9. जो यहाँ, इस दुनिया में है, वहाँ भी, उस दुनिया में वही है।
तोड़ दे यह दीवार ख़ुदी की, जान लेगा तब, तू भी वही है॥

---

* सृष्टि † उस ख़ुदा के रहने की कोई एक जगह नहीं, वह सर्वव्यापक है ‡ अंश

10. मरण कनां जे अगे मुआ, ''मां'' खे कीन मञिनि,
दुश्मन दोस्त हिक कयो, गोदिड़िया गड़िजनि,
वहिदत जे वादीअ में, दानह दमु धरिनि,
''तूं, मां'' विञाए विच मां, पंहिंजो पाणु पसनि,
हादी मुरीदु हिकु थियो, तफ़ावतु न कनि,
नाएं डिसु नेणनि, सूरत मूरत हिकु थी।

11. बियाई बान्हप छड़ि, सचा आउ अहदियत में,
लहमूं दमऊं लड़ि, त पाकाई पाकु थिए।

12. तो जा भांई मौज, सा मिड़ियोई महराणु थी,
ही उन्हनि जा औज, जिनि संबति सूरीअ पार डे।

13. जा न चवण जहिड़ी, सा मां चवां कीअं,
किस्सो आहे हीअं, ही ऐं हू हिकु थियो।

14. केहा शक गुमान, दानियाँ वे... सभ कहीं सूरत सैर तुसाड़ा।
लख पोशाकां करके आशिक़, कीतोई हम हैरान॥
शाह मंसूर दा सिर कपायोई, मल्ह खड़ा मैदान।
ओ भी तूँ है, ऐ भी तूं हैं, आप करीं अरमान॥
मुल्लां थी कर डेवें फ़तवा, आप थीवें क़ुरबान।
'सचू' होया नाम तुसाड़ा, करें देंएं आप बयान॥

10. मर गया जो भी मौत से पहले, ख़ुदी को उसने छोड़ दिया।
दोस्त दुश्मन में उस फ़क़ीर ने फ़र्क़ न रखा, कर एक दिया॥
सयाने वहदत की दुनिया में, जा पहुँचते, शेख़ी तज देते।
निकालकर अपने मन की 'तू-मैं' असली शक्ल अपनी लख लेते॥
मुर्शिद तालिब एक हो जाते सयाने फ़र्क़ नहीं हैं करते।
आजिज़* इतने, जब वे देखें, हमशक्ल उन्हें दोनों दिखते॥

11. सचल ग़ुलामी दुई की छोड़ो, वहदत की हालत में आओ।
भूल जाओ गर जिस्म जान को, पूरी तरह से पाक हो जाओ॥

12. रूह, जिसको तुम लहर समझते, ख़ुदा असल में है, समन्दर है।
ऊँची रूह जानो, तैयार जो चढ़ जाने को सूली पर है॥

13. राज़ रूहानी जो कहे नहीं जा सकते, कैसे कहूँ मैं राज़ वे,
मुमकिन नहीं।
यह सचल, अल्लाह वह, हुए एक दोनों, थोड़े-से में किस्सा तो,
बस, है यही॥

14. दाता! शक या वहम हो कैसा? ये रूप सभी ले घूम रहा है।
पहन ली है लाखों पोशाकें, हम आशिक़ों को हैरान किया है॥
शाह मंसूर† का सिर कटवाया, जल्लाद बन खड़ा मैदान में तू।
मंसूर भी तू, जल्लाद भी तू, ख़ुद अपनी मर्ज़ी करता तू॥
तू देता फ़तवा मुल्ला बनकर, ख़ुद ही क़ुर्बान हो जाता तू।
अब सचल नाम धरकर आया, बयान ख़ुद ही ख़ुद को करता तू॥

* नम्र
† एक सूफ़ी दरवेश जिनके 'अनलहक़' (मैं ख़ुदा हूँ) कहने पर उनकी गरदन कटवा दी गई।

15. दिलबर सानूं ऐंवें आखिया, न छोड़ ख़लक़ दी ख़ुवारें।
हिक नाम असाड़ा याद करीं, बिए डूंहें जहान विसारें।
विच दुनिया दे जो दम जीवें, नाल तोहीद गुज़ारें॥

16. बेख़ुदी विच वहदत वाली, जदां अचानक आन्दे।
आव दरियाअ हैरत दे अंदर, टुप टुप ग़ोते खान्दे।
'सुबहानी मा अइज़मु शानी', सचल इहो हर्फ़ अलान्दे॥

17. ख़ुद ही इहोई ख़ुद ही, नहीं और कोई अलीन्दा।
मंसूर होके वेखो, सूली ऊपर चढ़ीन्दा।
तरहूँ तरह तमाशा, आप आपणा बणीन्दा॥

18. सोई कमु करीजे, जंहिं विच अल्लाह आप बणीजे।
विच मैदान मुहब्बत वाले, दम क़दम धरीजे।
इहा तकबीर* "फ़नाफ़ी†" वाली, पहले पहर पढ़ीजे।
मार नग़ारा "अनालहक़" दा, सूली सिर चढ़ीजे।
अन्दर बाहर हिको होयों, "मूतू क़बल" मरीजे।
विच कुफ़्र इस्लाम कड़ाहां, आशिक़ ता न अड़ीजे।
"सुबहानी मा अइज़मु शानी", सचल सुर सुणीजे॥

* अल्लाह हो अकबर बोलना † विलीन होना

15. दिलबर ने मुझसे यही कहा, लानत भी पड़े, परवाह ना कर।
जो नाम दिया तुझको मैंने, बस, नाम वही एक याद तू कर॥
भूल जा अब जहान तू दोनों, दुनिया में जी रहा है जब तक।
ख़ुदा एक है, यही मानकर ज़िन्दगी अपनी बिता तू तब तक॥

16. बेख़ुदी करती एक ख़ुदा से, उसमें अचानक पहुँच जब जाते।
सचल, तब दरियाए हैरत में रह-रहकर वे ग़ोते खाते।
वाह शान ख़ुदा की अज़मत की! यही इलफ़ाज़ उनकी ज़बाँ पे आते॥

17. ख़ुद यह रूह ही ख़ुद अल्लाह है, और कोई अल्लाह नहीं कहलाता।
मंसूर बनो तुम भी, देखोगे, सूली पर भी वही चढ़ाता।
तरह-तरह से अपने आप ही, तमाशा अपना ख़ुद है बनाता॥

18. जिनसे ख़ुद ख़ुदा बन जाओ, सचल, बस, वे ही काम करो।
मुहब्बत के मैदान में अब तुम हिम्मत कर आगे क़दम धरो॥
ख़ुदा से यही तकबीर मिलाती, पहले पहर तुम ज़िक्र* करो।
अनाअलहक़ का बजा नगारा, सूली पर अपना सीस धरो।
अन्दर बाहर एक हो गए हो, अब मरने से पहले ही मरो॥
धर्म अधर्म को लेकर आशिक़! उलझन में ना क़तई पड़ो।
सुरे आज़म† तारीफ़ ख़ुदा की, क्या शान है उसकी! वही सुनो॥

* जप, सुमिरन † कलामे इलाही, अनाहत नाद

सतगुरु

1. मालूमु थी मुर्शिद खां, बी जा गुझी गालि,
हुन जी छा मजाल, "हू" लभे "हुन" सीं।

2. पुठीअ जञ न जुलु, मंझि तमाशे न पवीं,
घोटु करे तूं पाण खे, करि हंगामो हुलु,
सतगुर सचु सुणायो, सचल क़ुर्बु कुलु,
भोल न बिए कंहिं भुलु, वठिजि हालु हलाज जो।

3. अहद अहमद सूरत सागी, सिरुं बिनिही जो सोई,
अलस्तु बिरब्बकुम कालोबला, पंहिंजो पाण अखियोई,
सचा! हाजुरु हरि जा हादी, समुझीं सिरुं सभोई,
ग़ाइबु समुझीं ग़ैरु न जाणीं, हक़ु अलहक़ु उहोई।

4. आशिक़! अनाअलहक़ु, आखियो पियो आखेजि,
हादी अब्दुलहक़, हर्फ़ु हिदायत ही चयो।

अन्य संतों की तरह सचल साहिब का भी यही कहना है कि हमें सतगुरु और परमात्मा में कोई अंतर नहीं मानना चाहिये; सतगुरु और परमात्मा एक हैं, सतगुरु परमात्मा का ही रूप होते हैं। आत्मा के प्रति प्रेम के कारण परमात्मा स्वयं ही उसके उद्धार के लिये सतगुरु के रूप में मनुष्य-देह धारण करके संसार में आता है।

परमात्मा और सतगुरु का प्रगाढ़ प्रेम सूफ़ी संतों की वाणी की एक प्रमुख विशेषता है। नीचे दिये जा रहे सिंधी और सराइकी कलाम में इस प्रेम की झलक साफ़ दिखाई देती है।

1. एक और राज़ मुर्शिद से मालूम हुआ है मुझको।
किसमें हिम्मत है इतनी जो ढूँढ़ ले ख़ुद ख़ुदा को॥

2. बारात के पीछे चलो नहीं, मत खेल का हिस्सा बन जाओ।
तुम बन जाओ ख़ुद दूल्हा और सच का ढोल बजाओ॥
पूरे प्यार के साथ सचल को सच बताया है सतगुरु ने।
एक और मंसूर* है अब वह जो नहीं पड़ता किसी भ्रम में॥

3. फ़र्क़ नहीं ख़ुदा और मुर्शिद में, दोनों की सूरत, राज़ वही।
पूछा था जब तुमने हमसे, क्या मैं तुम्हारा ख़ुदा नहीं?
बेशक तू है ख़ुदा हमारा, हमारा भी था जवाब यही॥
कहे सचल, हर जगह है मुर्शिद, समझो, सारा राज़ यही।
उसे न जानो दूर, पराया, ख़ुदा है मुर्शिद, सच यही॥

4. मुर्शिद अब्दुलहक़ ने ख़ुद ही, इस आशिक़ को सबक पढ़ाया।
'मैं' अल्लाह हूँ, बार-बार यह सबक़ उन्होंने था दोहराया॥

* मंसूर एक सूफ़ी दरवेश थे जिन्हें परमसत्य का ज्ञान हो गया था और यही अवस्था सचल ने भी प्राप्त कर ली थी।

5. मंझि हुज़ूर हादीअ जे, तालिब बांहूं बधी विहंदें,
जिअं चवाए मुर्शिदु चवंदें, कलिमो क़ुफ़्री कहंदें,
गुरु ऐं गोबिंदु सूरत सागी, राह इन्हीअ में रहंदें,
रंग रेटे बेरंग थी, सचा! ठाह इन्हीअ में ठहंदें!

6. लानफ़ीअ जो कलिमो मूंखे, मुर्शिद पाण पढ़ायो,
नाबूदीअ जे नशे अंदरि, सतिगुर सैरु करायो,
हथियो डेई हिम्मथ वारो, सारो बारु खणायो,
सदिक़ु सचल मां सतिगुर तां, जंहिं जानिब जोशु जगायो।

7. मुर्शिद आखियो, आशिक़ु थीं तां, मुनकरु थी मशाख़ी,
शेख़ी, पीरी, बम बुज़ुर्गी, अथी सभु हलाखी,
इश्क़ु अमानत ख़ासु अल्लह जी, दिलि खे डे फ़राख़ी,
सचा! सोज़गुदाज़ सिवा सचु, बिया सभु चोर तबाख़ी।

8. छा जो काबो, छा जो क़िबलो, ही भी सभ बहाना।
नाक़स नियत काबे वारी, मर्द घुमनि मैख़ाना।
सचल सतिगुर ईंअ आखियो, हक़ु लहनि मस्ताना॥

5. मुर्शिद आगे हाज़िर तुम जब हाथ जोड़कर बैठोगे।
मुर्शिद तुमसे जो बुलवाए, हो कुफ़्र भी तो तुम बोलोगे॥
हमशक्ल हैं गुरु और गोबिन्द, इस राह पर जब डट जाओगे।
उतर जाएगा रंग दुनिया का और तब ही कुछ बन पाओगे॥

6. सिवा ख़ुदा के नहीं है कोई, ख़ुद मुर्शिद यह पाठ पढ़ाया।
ख़ुद की मुझे ना सुध रही जब, अन्दर की दुनिया में घुमाया॥
दिया सहारा, बढ़ गई हिम्मत, यों कर्मों का बोझ उठवाया।
सचल निछावर गुरु पर जिसने प्रभु से मिलो, यह जोश जगाया॥

7. आशिक़ बनो तो शेख़ी छोड़ो, मुर्शिद ने फ़रमाया है।
शेख़, पीर, बुज़ुर्ग होने की शेख़ी ने दुख ही दिया है॥
प्रेम है प्रभु की ख़ास धरोहर, हृदय को उदार बना देता।
सचल को मुर्शिद ने समझाया, है सच के सिवा सब दुख देता।
खाने-पीने के सब साथी, न साथ असल में कोई देता॥

8. क्या है काबा? क्या है क़िबला? यह सब एक बहाना है।
काबे जाने का जो इरादा, दिखावा, सिर्फ़ दिखावा है॥
बहादुर हैं जो ख़ुदा के आशिक़ अन्दर के मैख़ाने* जाते।
गुरु ने सचल को यह समझाया, मस्ताने ही रब को पाते॥

* मदिरालय, शराबखाना

9. उते कुफ़र न इस्लाम, आहे सभिनी खे सलामु।
कड़हिं डिए कीन की, इहो आरांभो आरामु।
मज़हब मूर न मञियाँ, आऊं मशरब मन्झि मुदामु।
क़ैदु भञी ज़ाहिरु थियाँ, आऊं जारी पियाँ जामु।
हादी साईंअ पाण सचूअ खे, इश्क़ु कयो इनामु॥

10. पसी सूरत सुप्रियुनि जी, मल्क हूराँ करनि हैरत।
तोरे सिज चन्ड जी तिलोइत, निहारण सुन्हं सजन जी।

11. महल माड़ियूँ दुनिया दौलत, हूराँ हुजिरा ज़ेवर ज़ीनतु।
ईन्दइ कम कीन में क़यामत, बिना सुहबत सुप्रियनु जे।

12. साहिब डिनः दवा दारूँ, मन्झूँ मुहबनि सन्दो सूरनि।
डिठे डुख डूर वहम वञनि, निहारण दे निमाणनि जे।

13. इश्क़ु थी इन्सानु, आयो सैलानी सैर ते,
सूरत में आदम जे, आदमु दमु महमानु,
सचा तूं सुल्तानु, सतगुर सचु सुणायो।

9. वहाँ कुफ़्र इस्लाम में फ़र्क़ नहीं, हर मज़हब को मिलती है इज़्ज़त।
यहाँ आग लगाई मज़हबों ने, नहीं इनसान को मिलती राहत॥
मैं ना किसी मज़हब को मानूँ, ऐसी जगह चला मैं जाता।
जिस जगह पीने को मुझको, वह अमृत-जल है मिल जाता॥
निकल क़ैद से बाहर आ गया, भर-भर जाम पियूँ दिन-रात*।
मुर्शिद सचल के ख़ुद मालिक हैं, बख़्शा इश्क़ का उसे इनाम॥

10. देख मेरे दिलबर† का मुखड़ा हूरें, फ़रिश्ते हुए हैरान।
निकलें सूरज और चाँद जब, देखते रह जाएँ उसकी शान॥

11. हूरें, ज़ेवर और सजावट, महल, अटारी और धन-दौलत।
क़यामत के दिन काम न आते, काम आती दिलबर की सोहबत‡॥

12. दर्द जो बिछोड़े का प्रियतम से, मुर्शिद उसकी दवा है देता।
दुख वहम सब दूर, मेहर की नज़र निमाने पर जब करता॥

13. हो इनसान रूहों के प्यार में, सैलानी बन घूमने आया।
मेहमान बन कुछ अरसे का, इनसान की सूरत लेकर आया।
ऐ सचल! तू तो सुलतान है, सतगुरु ने यह सच बताया॥

---

* निरंतर † प्यारे सतगुरु से अभिप्राय है ‡ संगति

14. जाणु न तफ़ावतु, अब्द ऐं अल्लह जो,
हू आहे अमृतु; ही भी डूरि न उन खूं।

15. ओडूँ रहबर आए, यार तुसां कूं बहूँ पुछदा।
सुणण नालि विसर गयोसे, मुल्ला जो सबक़ पढ़ाए॥
सभ कंहिं वेले शौक़ सजण दे, दिल ते शोर मचाए।
आपे जाणीं याद कितोने, सचल बख़्त सवाए॥

16. क्यों दरवेश सडाईं सचल? तूं क्यों दरवेश सडाईं?
विच इबादत ना विच ताअत, कहें सो वेल आई?
कोझे तेडे कम सभोई, ताजां सिर विच पाईं!
आपणी राह वी गुम कीतोई, बंहाँ नूं वाट विखाईं,
हादी मुर्शिद मेहर करेसी, पाँद तिन्हीं दर पाईं॥

17. न बेदीनी बंदे में, न इस्मु इस्लामी,
हिंदी सिन्धी नाहि को, शाहु नाहे शामी,
नका हरिकत हुनखे, नकी आहे आरामी,
ख़्वाजा ख़ुदामी, पंहिंजी करे पाण थो।

14. अल्लाह और उसके ख़ादिम* में, फ़र्क़ ना तुम कोई भी मानो।
अल्लाह अमृत† है, ख़ादिम को अमृत से तुम अलग ना जानो॥

15. रहबर मेरा उधर से आया॥
दिलबर तेरा तेरे बारे बहुत कुछ पूछे, मुझे बताया।
सुनते ही मैं भूल गया सब, जो कुछ था मुल्ला ने पढ़ाया॥
साजन से मिलने के चाव से हर पल दिल में हूक उठे।
दिलबर ने ख़ुद याद किया है, भाग सचल के जाग उठे॥

16. क्यों दरवेश कहलाए सचल! तू? दरवेश तू क्योंकर कहलाए।
नहीं इबादत करता जब तो दरवेश तू कैसे बन जाए॥
काम तो तेरे क़ाबिले नफ़रत, पर सिर पर ताज पहन रखा है।
अपनी राह तो भूल गया है, औरों को राह दिखा रहा है॥
मेहर करेगा मुर्शिद रहबर! पल्ला उस आगे पसार अब॥

17. ख़ुदा का बंदा ना तो मुस्लिम, ना ही वह काफ़िर है होता।
ना वह हिन्दी, ना वह सिन्धी, ना किसी देश का राजा होता॥
आराम नहीं कभी मुर्शिद करते, बिन उलझे हैं काम वो करते।
मालिक होते कुल दुनिया के, पर ख़ादिम‡ बन काम वे करते॥

---

* सेवक, यहाँ सतगुरु से अभिप्राय है † शब्द ‡ सेवक

18. जोई नापैदा हुयड़ो, सोई थियो वरी पैदा,
जोई पैदा असुल खां हुयड़ो, सोई थियो ना पैदा,
पैदा सो ना पैदा थिए, थिए तड़हिं हक़ हुवेदा,
पैदा जी कल तड़हिं पवंदी, नापैदा थी वेंदा।

19. हदें वञे हरिको, लाहदि वञे पीरु,
सचू सो फ़क़ीरु, जो हद लाहद लंघे वञे।

18. जिसका कभी ना जन्म हुआ था, उसने ही है जन्म लिया।
जन्म ले रहा था जो शुरू से, जन्मों से वह छूट गया॥
जन्मों से जब हो छुटकारा, सच का इल्म तभी है होता।
जनमा कौन? पता तब चलता, जब वह अजन्मा हो जाता॥*

19. हद† तक हर कोई जा सकता है, बेहद‡ में जो जा पहुँचे
सो पीर है।
लाँघ जाए जो हद बेहद दोनों, सचल का है कहना,
वही फ़क़ीर है॥

* भाव यह है कि अजन्मा प्रभु ही सतगुरु के रूप में जन्म लेता है और सृष्टि के आरंभ से जन्म-मरण के चक्कर में पड़ी आत्मा सतगुरु की कृपा से ही उस चक्कर से छूट पाती है। अंदर जाने पर सतगुरु और प्रभु को एक देखकर ही भक्त को इन दोनों सत्यों का ज्ञान होता है।

† सम्भवतः नुक़्तए-सुवैदा यानी तीसरा तिल ‡ सम्भवतः लाहूत यानी दसवाँ द्वार

आत्म-दर्शन—ख़ुद को पहचानना

1. ज़ाहिरु ककरु आंइ, मींहुं तोई बातिन में,
पाणु उहोई भांइ, जंहिं वसिए सां वस थिए।

2. अवलि भेरे भञु, सचल बंद ख़्यालाति जा,
तंहिं पुजाणूं वञु, हुलाजी* हैरत में।

3. अदबु अथी ओट, ओटि त अगाहों थिएं,
मारि नग़ारे चोट, आशिक़ अनाअलहक़ जी।

4. दीनु कुफ़्रु दिलि दामु, डिजि मिड़ियोई मौज में,
तिहां पोइ हुकामु, हरि जा सचा तुंहिंजो।

5. जे मञिनि था आदमी, से न मञां मां,
सचू आहियां आं, जो बान्हो बिए जो न थियां।

6. पाण पढ़िजि, पाण बिहिजि, पाण ई सज्दो कजि,
बोलु न बियो भांइजि, काफ़रु मोमिनु हिकु थियो।

* मंसूर, हलाज यानी धुनिया थे।

सचल सरमस्त का कलाम हमें अपना वास्तविक स्वरूप पहचानने की प्रेरणा देता है। हमें समझाया गया है कि मनुष्य का वास्तविक स्वरूप शरीर नहीं, आत्मा है, जो और कोई नहीं, ख़ुद परम सत्य परमात्मा ही है। आत्मा इस तथ्य से अनजान है, क्योंकि इसके और परमात्मा के बीच ख़ुदी की, अहं की दीवार है। जब वह दीवार गिर जाती है, तो आत्मा को परमात्मा से अपनी एकता का अनुभव हो जाता है और यह अत्यंत सुखद अनुभव तभी होता है जब सतगुरु उस पर अपनी दया-मेहर की वर्षा करते हैं।

1. दिखता तो हमें बादल ही है, छिपी रहती है उसमें बारिश।
रूह वह हरी-भरी हो जाए, जिस पर ख़ुद कर दे बारिश* ॥

2. मन के विचारों का यह चक्कर ऐ सचल! जो पहले तोड़ दे तू।
बन जाए मंसूर फिर तू भी, हैरत में सबको डाल दे तू॥

3. लोक-लाज तो एक परदा है, गर पार परदे के जाएगा।
तब डंके की चोट पर आशिक़! 'ख़ुदा हूँ मैं' कह पाएगा॥

4. तोड़ दे धर्म-अधर्म के फन्दे, रह अब रूहानी मस्ती में तू।
अल्लाह का यह हुक्म है, फिर तो हर स्थान तेरा, हर जगह है तू॥

5. लोगों को विश्वास है जिसमें मुझे उसमें विश्वास नहीं।
मैं तो सच हूँ, वही सच हूँ मैं, बन सकता किसी का दास नहीं॥

6. पढ़ता ख़ुद ही, उठता ख़ुद ही, ख़ुद ही है सिजदा करता।
दूसरा बोल न भाता उसको, फ़र्क़ न काफ़िर मोमिन में रहता॥

* रहमत की बारिश

7. पसी भिति भुलियोसि, ता आउं आदमी आहियां,
विचां जां वियोसि, ता साग॒यो सचू आहयां।

8. जहिड़ो भांयुमि पाण खे, तहिड़ो आहियां आउं,
बाक़ी रहियो नांउ, सचू मूं साहिब जो।

9. सतगुर सचु सुणायो, सचा तूं सुल्तानु।
तुंहिंजो शाही शानु, ब॒ान्हप ब॒ोली नाहि का।

10. हुते केरु हुयासि, आयुसि हिते केरु थी,
हुतिड़े नालो ब॒ियो हुयो, नांअ नएं हिति थियासि,
आशिक़ु थी आयासि, न त हुयसि माशूक़ी माम में।

11. हुयसि माशूक़ी माम में, आशिक़ु थी आयासि,
अचणु न हो हिति मुंहिंजो, ख़्वाहिश हिक खंयासि,
हुस्न संदी हवस हुई, जंहिं हिति हेरियासि,
विचां आउं वियासि, सचू साग॒ियो सचु थियो।

12. तूं ई मालिकु मुल्क जो, ब॒ान्हो भांइ म पाणु,
लाख़ैर फ़ी अबीदी, इहो अथी उहञाणु,
सूरत मंझि सुञाणु, पाणु पंहिंजो पाणही।

7. ख़ुदी की थी दीवार, भ्रम में था, समझता था, इनसान हूँ मैं।
गिर गई दीवार जब तो जाना, वही हूँ मैं, परम सत्य हूँ मैं॥

8. जैसा मैंने समझा ख़ुद को, जान लिया अब, वैसा ही हूँ।
सिर्फ़ नाम से सचल, असल में, सचल, मैं अब मालिक का ही हूँ॥

9. सतगुरु ने मुझे सच समझाया, कहा सचल! तू है सुलतान।
ज़बान ग़ुलामों की न बोल तू, तेरी तो शाहों-सी शान॥

10. कौन था मैं तब, जब मैं वहाँ था, क्या बनकर मैं यहाँ हूँ आया।
नाम वहाँ कुछ और था मेरा, नाम नया, जब यहाँ मैं आया।
राज़ है यह, माशूक वहाँ मैं, पर यहाँ आशिक़ बनकर आया॥

11. राज़ है यह, माशूक़ वहाँ मैं, पर यहाँ आशिक़ बनकर आया।
मुझे यहाँ आना तो नहीं था, हुई एक ख़्वाहिश, तभी मैं आया॥
यह ख़ूबसूरत दुनिया देखूँ, इस आरज़ू ने था रिझाया।
ख़ुदी मिटी, हो गया सचल वही, उस सच का ही रूप फिर पाया॥

12. तू मालिक है कुल दुनिया का, ख़ुद को तू ग़ुलाम ना मान।
ग़ुलामी में है नहीं भलाई, इशारे ज़िंदगी के पहचान।
असली सूरत क्या है तेरी, जान ले तू, ख़ुद को अब जान॥

इश्क़

1. मुहबत जे मैदान मां, लाहूती लंघनि,
आदेसी अरिमान में, घूमाटिया घुमनि,
लंघे हलिया हाल खां, नकी क़ालु कहनि,
ब॒ाफ न ब॒ाहरि विझनि, मचु मचायो मन में।

2. मचु मचायो मन में, ब॒ाफ न ब॒ाहरि विझनि,
वतनि वेग॒ाणा विरह में, नेणें निंड न कनि,
सुडि॒का से ई सोज़ जा, भिनीअ राति भरिनि,
पंहिंजीअ परि में पाण खे, था प्रितऊं पचाइनि,
सिखियो सामियड़नि, इश्क़ु इहो सभु आईअ खां।

3. इश्क़ु इहो आईअ खां, सिखियो सामियड़नि,
आशिक़ मथां आगि॒ जे, ओलारा डि॒यनि,
भंभड़ बाहि इश्क़ में, सपूरनु सड़नि,
अचियो पवनि आड़ाह में, सिर जो सांगु न कनि,
लाइक़ लाल थियनि, ख़ामी लहिसी लूसिजी।

ख़ुदा के लिये सचल साहिब के इश्क़ की गहराई का बख़ूबी बयान करना मुश्किल है। इतना कह देना काफ़ी है कि इस इश्क़ की गहराई में ग़ोता लगानेवाले को एक अजीब मस्ती का एहसास होता है। सचल साहिब का कहना है कि परमात्मा के सच्चे भक्त इश्क़ की राह पर चलकर ही उसके घर का सफ़र तय करते हैं। केवल प्रेम-मार्ग ही भक्त को उसकी मंज़िल पर पहुँचाता है। प्रेमी भक्त सदा प्रभु की याद में मस्त रहते हैं, ज्यों-ज्यों प्रेम बढ़ता है, उनकी मस्ती भी बढ़ती जाती है। प्रेम में मग्न हुए वे सूली पर चढ़ जाने से भी नहीं झिझकते। सचल साहिब ने प्रेमी भक्तों के विरह के दर्द का भी ज़िक्र किया है। प्रेमियों के दिल में तो प्रेम की आग धधकती है, 'बाहर मगर कभी उफ़ नहीं करते'। उनके अनुसार प्रेम प्रभु की अनमोल दात है और जिज्ञासु को संबोधित करते हुए वे कहते हैं कि अगर तू प्रभु का प्रेमी भक्त बनना चाहता है, तो 'जीते-जी ही मरकर जी तू'।

1. ख़ुदा की बंदगी में लगे हैं फ़क़ीर जो, इश्क़ के मैदान में से गुज़रते।
ख़ुदा से विसाल की ख़्वाहिश से तड़पते इसी राह से वे सफ़र हैं करते॥
होश नहीं ख़ुद की, अन्दर की मंज़िलें लाँघते जाते,
पर ज़िक्र नहीं करते।
दिल में इश्क़ की आग धधकती बाहर मगर कभी उफ़ नहीं करते॥

2. दिल में इश्क़ की आग धधकती, बाहर मगर कभी उफ़ नहीं करते।
नींद है उड़ जाती आँखों से, बिछोड़े में दिलबर के तड़पते।
विरह का दर्द बेचैन कर देता, आधी रात को सिसकियाँ भरते॥
कुम्हार की भट्टी जलती अन्दर, पता न उसका चलता बाहर।
सीख यह उससे ले ली, वे भी तपते रहते अन्दर ही अन्दर॥

3. कुम्हार की भट्टी से सीखा यह, अन्दर इश्क़ की भट्टी में तपते।
ख़ुदा के आशिक़ भक्त फ़क़ीर वे, इश्क़ की आग में हैं कूद पड़ते॥
इश्क़ की आग धधकती, उसमें कूद पड़ते वे, राख हो जाते।
धधकती आग में कूद जाते हैं, सिर की भी परवाह न करते।
गुनाह सब उनके हैं जल जाते, ख़ुदा के क़ाबिल लाल वे बनते॥

4. अदियूं! आदमु नाहियां, फ़लक न आ फ़लकनि,
ख़्यालूं अची ओचिते, ख़ललु विधो ख़लक़ुनि,
नाहे मुयस्सिरु मलकनि, इहा अमानत इश्क़ जी।

5. नाहे मुयस्सिरु मलकनि, इहा अमानत,
ख़ामनि ख़ियानत, विधी अची इश्क़ में।

6. इश्क़ु मुहबत बाझूं जाणी, बी सभु राह ख़िलाफ़ी,
बुज़ुर्ग काणि दीन जे कनि था, तिल्सम सभु तलाफ़ी,
सचा हरगिज़ि से न थींदा, सचा सूफ़ी साफ़ी।

7. न मां कयड़ो खुड़िको तस्बीह, न कयड़मि ज़ुहिदु इबादत,
नकी मस्जिद मंदरि वियड़ुसि, न कयड़ुमि तक़वा ताअत,
सचल जो थियो बख़्तु सवायो, जो कयड़इ इश्क़ु इनायत।

8. ही सभु सैरु उन्हीअ जो, भरि नका जंहिं बस्ती,
क़ुल्ज़ुम कारोंभार ककोरियल, कर नका जंहिं कश्ती,
मंझि दरियाअ मुहबत वारे, हालु सटीं हीअ हस्ती।

9. इश्क़ जिनीं सां ग़म्ज़ो लातो, इल्मु न से बियो पढ़ंदा,
मंझि कुफ़्र इस्लाम मज़ाहब, आशिक़ मूरु न अड़ंदा,
मारे नारो हक़ जो सचा, सूलीअ सिरड़ा धरंदा।

4. बहनो! ना मैं मनुष्य साधारण, ना हूँ कोई आसमानी फ़रिश्ता,
प्रेमी हूँ, मस्त उसकी याद में, लोग अचानक डालते बाधा,
प्रेम की है यह धरोहर दुर्लभ पा नहीं सकता कोई फ़रिश्ता।

5. अमानत इश्क़ की मिले मुश्किल से, फ़रिश्ते भी इसे नहीं हैं पाते,
आशिक़ को जो मिली अमानत, ढोंगी* आकर हक़ जताते।

6. इश्क़ मोहब्बत के सिवाय है सब गुमराह करते,
धर्म के मुखिया धर्म के नाम पर छलावा करते,
ये न हरगिज़ सच को पाएँ, सच्चे पाक रहते हैं सूफ़ी।

7. खन-खन करती फेरी न तस्बीह, क़ायदे से नहीं बंदगी की,
दाख़िल हुआ न मन्दिर मस्जिद, ना संयम किया, ना ही पूजा की,
चमकी ख़ूब सचल की क़िस्मत जब इश्क़ की इस पर मेहर हुई।

8. वे तो भटकते हैं उजाड़ में निकट नहीं जिसके कोई बस्ती,
इस सागर पर घोर अँधेरा, बादल घने, ना तट ना किश्ती,
इश्क़ के दरिया में तू कूद अब और मिटा दे अपनी हस्ती।

9. इश्क़ ने मोह लिया दिल जिसका और कोई इल्म वो नहीं है पढ़ता,
कुफ़्र, इस्लाम या और मज़हबों में आशिक़ बिलकुल नहीं अटकता,
सचल, लगाए जो सच का नारा, सूली पर है जा सिर धरता।

* दिखावे का प्रेमी

10. आशिक़ पियनि जुकोमु, हथां हबीबनि जे,
हलाहल जे हेर ते, हातिक कनि हुजूमु,
इहा थनि रुसूमु, कड़े काणि न तनि खे।

11. आशिक़नि आड़ाह में, पियो निज़ारो,
ग़राणे में इएं ग़रिया, बर्फ़ ग़रे जिअं पारो,
नातिक़ु को नियारो, झले रोबु रवीअ* जो।

12. जुल्वो इश्क़ जो अर्श कुर्स ते,
सर ज़मीन छा ज़ेरि ज़मीन।

13. जीअणु आहे जग़ में, बिना इश्क़ अज़ाबु,
सचू सिकायनि जो, थो खोले नींहं निक़ाबु।

14. समुझायो माँ तालिब तोखे, सचु इहोई सारो।
अर्ज़ समा में वाह वज़ाइजि, आशिक़ नींह नग़ारो।
नामु छड्डे बदनामु थी अचु तूँ, लोकु डिसी सभि सारो।
सटु सचलु सामान सुल्ह जो, मारि हक़ानी नारो।।

15. बिरह जी बाज़ार, जेका डिसण ईंदी।
जेका जो डिसन्दी तिजिलो तुंहिंजो, रहन्दी मन्झि ख़ुमार।
सौदो जा कन्दी सिर जो, विहन्दी सा कीन क़रार।
जे कंहिं चिमको डिठो तुंहिंजो, सा सिर डीन्दी सरदार।
सचू इन्हीअ सीर में, आहे कुसण जी कार॥

---

* विरहरूपी सूरज

10. अपने प्रीतम के हाथों से प्रेमी पी लेते विष घातक।
महफ़िल में घातक विष पीना सच्चे प्रेमियों की यह आदत।
यही है रीति, डरना नहीं है, पीना पड़े जो विष भी घातक॥

11. इश्क़ की आग के गहरे सागर कूदते देखे हमने आशिक़।
गर्मी बढ़े ज्यों बर्फ़ है गलती, इश्क़ के ताप से गलते आशिक़।
सह पाते हैं ताप इश्क़ का धैर्यवान् कोई विरले आशिक़॥

12. ऊँचे तख़्त पर आसमान के जलवा इश्क़ का होता जैसा।
इस धरती पर या पाताल में कहीं भी दिख सकता नहीं वैसा॥

13. इश्क़ बिना दुनिया में जीना दुख इनसान को बहुत है देता।
दीवानों का इश्क़ दिलबर के मुख से नक़ाब हटा है देता॥

14. बता दिया है तुझे ऐ तालिब! अब यह सच खोलकर सारा।
धरती पर और आसमान में इश्क़ का तू अब बजा नगारा।
नाम का फ़िक्र छोड़ बदनाम हो, देख लिया जग तूने सारा।
ख़्याल छोड़ इस जग से सुलह का, लगा दे तू अब सच का नारा॥

15. विरह के बाज़ार में जो आएगी, जलवा तेरा देख मस्त हो जाएगी।
सिर का सौदा करेगी जो कोई भी, चैन से वह बैठ
कभी ना पाएगी॥
देख लेगी जलवा तेरा जो, सचल, बेझिझक दे देगी मालिक! जान वह।
इस नदी के गहरे जल में कूदना, पुर्ज़ा-पुर्ज़ा कट मरने-सी बात है॥

16. चुको इन्हीअ चाश जो, चखी थिया चरिया।
चरियो-खरियो लोकु चवे, आहिनि कीन चरिया।
भागी से भरिया, सचा सिक वारा थिया।

17. दिल दिलीर करे अचु आशिक़, सुस्त यक़ीन न थीउ तूं।
टोड़े शक गुमान सभेई, प्रेमी प्यालो पीउ तूं।
मूतू क़बल अन्त मूतू, सचू जीवण में मर जीउ तूं।

18. देवी रखी दिलि में, जंहिं मनु कयो मन्दिरु।
अन्दरई अन्दर, सचू पुजारी सो पुरि थियो॥

19. रे सिक साहबडिनो चवे, तोरे कोड़ें पढ़ीं किताबु।
भजी ग़ैर गुनाह खूं, सवें करीं सवाबु।
सुणी दहशत दोज़ख़ जी, अखियों भरे आबु।
अथेई सभु हिजाबु, रे सिक साहबडिनो चवे॥

20. मुल्ला जे मुहबत जी, वटी हिक पीएँ।
छडे मक्तब मारिका, हून्दि सूरीअ सिरु डिएं।
कीअं थो हितु जिएं, रे सिक साहबडिनो चवे।

16. एक घूँट अमृत वह जिसने चख लिया, मस्ती में वह खो गया है,
खो गया।
कहते हैं उसे पागल या गया काम से, पर असल में पागल नहीं है
हो गया।
वह तो ख़ुशकिस्मत है, कहता है सचल, ख़ुदा को पाने को बेताब
वो हो गया॥

17. दिल मज़बूत करके आ इस राह, यक़ीन कमज़ोर ना होने दे तू।
छोड़ दे भ्रम और शक सब आशिक़! और बस, इश्क़ का प्याला
पी तू।
सचल कहे, मर मौत से पहले, जीते-जी ही मरकर जी तू॥

18. मन में बिठा उस परम शक्ति को मन को बना लेता जो मन्दिर।
सचल कहे, वह हो जाता है पूर्ण पुजारी अन्दर ही अन्दर॥

19. सचल कहे, कुछ भी न काम दे। इश्क़ नहीं जो तेरे मन में॥
किताबें करोड़ों चाहे पढ़ ले, पाप छोड़ पुण्य सैकड़ों कर ले।
नरक की सुन ख़ौफ़नाक सज़ाएँ, आँखों में चाहे आँसू भर ले।
साहिबडिनो कहे, कोई ओट न काम दे, इश्क़ नहीं जो तेरे मन में॥

20. मुल्ला! इश्क़ का एक भी प्याला पी ले अगर तो सब छोड़ दे तू।
किताबी इल्म की फ़िक्र रहे ना, सिर भी सूली पर रख दे तू।
साहिबडिनो हैरान है, पिये न क्योंकर? इश्क़ बिना किस तरह
जिये तू॥

21. मौतु त माणहूनि खे, आहि आशिक़नि वड़ी ईद।
पी प्यालो प्रीति जो, थिया शौक़ वड़े शोरीद।
तोरे थियनु शहीद, साहबड़िनो त बि पुछनि वाट वसाल जी॥

22. हिकु सफ़रु साइत, बियो सफ़र साल,
पहिरियों ता राहत, पोयों ता पोइ रहियो।

23. सुहणी सूरत यार सुहणे दी, डिठम जो हिक डिहाड़े।
दस्त कीतुस तलवार बिरह दी, मारे वत उलारे॥
ख़ड़े रहनि बध बांहां अगूं, आशिक़ विच नज़ारे।
रूबरू माशूक़ां सचल, डेंदे सिर बेचारे!

24. सुहणे दे शल बाग़ हुसुन कूं, कोसा वाउ ना लगे!
हुण दे आशिक़ असां भी निसे, इश्क़ लातोसे अगे।
सूरत सुहणी वेखण नाले, तन सचल दा तगे!

25. ग़ाज़ियाँ नूं ग़म केहा यारो, सिर दा सांग न करदे।
विच मैदान मुहब्बत वाले, मर्दाने थी मरदे॥
नालि उन्हां दे थीवे न पाड़ा, जो होवनि बेदर्दे।
सचल आशिक़ ईवें सुञापिन, रूइ जिन्हां दे ज़र्दे॥

21. मौत तो आती है हर इनसान को, पर आशिक़ को मौत ईद बन जाती है।
प्याला इश्क़ का ज्यों-ज्यों पीता शौक़ से, मस्ती उसकी त्यों-त्यों बढ़ती जाती है।
चढ़ा हो गर सूली पर, फिर भी, साहिबडिनो, मिलाप की राह ही तो पूछी जाती है॥

22. एक सफ़र* पूरा हो पल में, दूसरा कई साल† ले जाए।
पहले से राहत मिल जाए, दूसरा मंज़िल ना पहुँचाए॥

23. हसीन दिलबर का दिलकश मुखड़ा एक दिन मैंने जो देख लिया।‡
उठा तलवार बिरह की उसने किया वार मुझे घायल कर दिया॥
नज़ारा वह जब देखते आशिक़, हाथ जोड़ खड़े रहते आगे।
सिर भी अपना कर देते हैं, भेंट माशूक़ को वे बेचारे॥

24. ख़ुदा करे हसीन दिलबर के बाग़ में, चले न तती हवा§॥
पुराना एक आशिक़ हूँ मैं भी, नहीं आशिक़ मैं नया-नया॥
दीदार उस दिलकश सूरत का ही है ज़िन्दगी का सहारा बना हुआ॥

25. बहादुरों को ग़म भला कैसा, सिर की भी परवाह ना करते।
इश्क़ के वे मैदान में यारो! मर्द बनकर जाते और मरते॥
उनमें न हरगिज़ शामिल होना झेला न जिन्होंने बिरह का दर्द।
आशिक़ों की पहचान यही है, चेहरे होते बिरह में ज़र्द॥

* इश्क़ की राह के सफ़र से अभिप्राय है
† कई जन्म ले लेता है
‡ सतगुरु के नूरी स्वरूप के दर्शन
§ बसंत की धीमी और ठंडी हवा

26. इश्क़ केहा केहा आन्दा! सुणो अड़ी मायो, मैं क्या जाणां?
इश्क़ अहीं कूँ आखनि सारे, रातियां डींहां जो रोवान्दा।
इश्क़ सरासर जाण मलामत, लोकां नूं नहीं भांदा!
अक़्ल शर्म सभ दूर सटींदा, इश्क़ जहें डहूँ आन्दा।
साह सचल दा रोज़ अज़ल दे, विरह कनूं नहीं वान्दा॥

27. इश्क़ दी ख़बर, न तेकूं है बिरह दी ख़बर।
जे पुछीं असां कनूं, हे बे ज़ियान ज़हर॥
तेकूं नहीं कीता हे, अजा बिरह बे-ख़बर।
सिर जान दिल सभाई, अगूं दोस्त धर, न डर॥
नहीं ख़्वाब नहीं आराम, इहो इश्क़ दा असर।
डेंदा अव्वल निकाली, तेकूं सारा शहर।
सचल असांडे कीते, होवें रोज़ मुन्तज़र॥

28. जानी सो तेडा जमाल, केहा केहा होन्दा।
ज़रे होन्दा शकर शीरीं, ज़रे ज़हर ज़वाल॥
ज़रे आन्दा ख़ुश असांनूं, ज़रे जीउ दा जंजाल।
डेखण दे विच जोई आन्दा, हेई सो ख़ास ख़्याल।
सुण सचल यार मैनूं जो कीता, अहीं दे नींहुँ निहाल॥

29. रोज़ अज़ल उस्ताद असानूं, हिक सतर प्रीति दी पाढ़ी।
सा मैं दिल दी तख़्ती उते, चाह विचूं लिख चाढ़ी।
सचल इश्क़ बुढा ना थीवे, क्या जो चिटी डाढ़ी॥

26. मैं क्या जानूँ, अम्मा मेरी! इश्क़ है कैसे-कैसे आता।
इश्क़ उसी को कहते हैं सब, जो दिन-रात है हमें रुलाता।
इश्क़ से बदनामी ही मिलती, लोगों को यह नहीं है भाता॥
दूर भगाता अक़्ल शर्म सब, जिस तरफ़ से भी यह आता।
रोज़े अज़ल* से बिरह सचल की जान न छोड़े, बहुत सताता॥

27. तू अनजान है इश्क़, बिरह से, यह इश्क़ बिरह है एक ज़हर।
मगर अगर तू मुझसे पूछे, नुक़सान नहीं करता यह ज़हर॥
अभी तक इश्क़ बिरह ने तुझको कर नहीं दिया है बेख़बर।
सिर, जान और दिल, सब कुछ तू यार के आगे रख दे, मत डर॥
नींद नहीं, आराम नहीं, बस, इश्क़ का तो इतना ही असर।
लोग तो शहर से निकाल ही देंगे तुझे,
पर सचल यही माँगे, तू यार का कर इन्तज़ार, रोज़ इन्तज़ार॥

28. वाह! जमाल† वह तेरा दिलबर! कैसा-कैसा है वह होता।
एक पल शक्कर, शीरा होता, पल दूसरे ज़हर-सा कड़वा होता॥
एक पल हमें है ख़ुश कर देता, दूसरे बन जाता जंजाल।
जैसा भी है हमें वह दिखता, वैसे ही आते रहते ख़्याल।
सचल कहे, सुन यार! उसी के, इश्क़ ने किया मुझको निहाल॥

29. मुर्शिद ने हमें पहले ही दिन, इश्क़ की थी यह सतर पढ़ा दी।
शौक़ से दिल की तख़्ती पर थी, सचल, हमने वह सतर चढ़ा ली।
इश्क़ कभी ना होता बूढ़ा, हुआ क्या सफ़ेद जो हो गई दाढ़ी॥

* सृष्टि के आरंभ से † सुंदरता

30. मैं तालिब जुहद न तक़वा दा, हिक मँगां मुहब्बत मस्ती।
डिती हुण उस्ताद अज़ल दे, हथ तलब दी तख़्ती।
सचल मस्ती मूल न थीवे, जां जां होवे हस्ती॥

31. आ पान्धी कर नाल असा डे, काई गाल्हि सज़ण दे आवण दी।
हजर तेडे मेडा हाल विञाया, इथां रुत आई है सांवण दी॥
ख़ूब बसन्त बहार जो खुलया, हुण आई मुन्द मिलावण दी।
मैं ग़रीब निमाणी नूं नाहीं, क़ूत हर्फ़ अलावण दी।
नालि सच्चू दे, सुहिणा साईं, कर काई नींहुं निभावण दी॥

32. अखियाँ यार सुहणे दियाँ सुहणयाँ, ख़ूनी ख़ुलम करेन्दयाँ।
बाज़ाँ वांगुण करन सतूने, दम न हिक धेरेन्दयाँ॥
खावन मासु ते रत भी पीवन, चंगुल नाल मरेन्दयाँ।
अञा भी सचल ढापन नाहीं, कारण ख़ून खड़ेन्दयाँ॥

33. अखियाँ बाज़ अक़ाब सुहणे दियाँ, करन पखन परवाज़ वडे।
अगूं उन्हाँ, मुश्ताक़ाँ दे, होन्दे सौ न्याज़ वडे॥
बांहाँ बध, घत गल विच गारी, करदे खड़ ऐलाज़ वडे।
ता भी सचल माशूक़ां दे, होसनि ग़मज़े नाज़ वडे॥

30. मैं तमन्ना नहीं रखता हूँ, मन के साथ ज़बरदस्ती की।
मेरी तो, बस, एक ही चाहत, चाहत इश्क़ की मस्ती की॥
जो उस्ताद* है रोज़े अज़ल† से, उसने मुझे अब बुला लिया है।
सचल, इश्क़ की मस्ती नहिं आती, जब तक है हौंमैं की हस्ती॥

31. आओ राही! मेरे साथ करो तुम कोई बात सजन के आने की।
बेहाल किया तेरे विरह ने साजन! यहाँ रुत आ गई है सावन की॥
ख़ूब हरियाली छा गई है अब, आया मौसम वह जो मिलाता।
निमानी हूँ मैं, मुझ ग़रीब को, बहुत बोलना नहीं है भाता॥
सचल के साथ ऐ हसीन दिलबर! प्रीत निभाने की ही बात कर॥

32. यार हसीन, ख़ूबसूरत आँखें, पर ज़ालिम हैं, बहुत सताती हैं।
झपटती हैं बाज़ों की तरह वे, पल भर भी सब्र ना करती हैं॥
मांस खाती हैं, ख़ून पीती हैं, नोच पंजों से लेती हैं।
फिर भी जी नहीं भरता उनका, सो ख़ून सारा पी लेती हैं‡॥

33. हसीन माशूक़ के चश्म बाज़-से, उड़ान वे ऊँची भरते हैं।
सौ-सौ बार माशूक़ों आगे, ग़ुज़ारिश आशिक़ करते हैं§॥
हाथ जोड़ रहें खड़े सामने, कई तरह से अर्ज़ वे करते हैं।
पर माशूक़, सचल, नाज़-नख़रा फिर भी बहुत उनसे करते हैं॥

---

* भटकी हुई रूहों का उस्ताद यानी ख़ुदा † सृष्टि के आरंभ से जब रूहें ख़ुदा से बिछुड़ी थीं
‡ भाव यह है कि सतगुरु की कृपा-दृष्टि जीव को विरह देकर उसकी बड़ी कठोर परीक्षा लेती है, अन्ततः जीव का अहं ही मिटा देती है। § भाव यह है कि सतगुरु की कृपा-दृष्टि पाने के लिये शिष्य को बहुत परिश्रम करना पड़ता है।

34. सुहणा यार हमेश साड़े नाल भी, खिलदा हसदा।
हिक दम दूर न थीवे साथूं, विच अखीं दे वसदा॥
बिया कोई कम ना जाणे हरगिज़, खिल खिल दिलड़ी खसदा।
नींहुँ निबाह असां नाल सचल, गाल्हि इहाई डसदा!

35. इश्क़ लगा घर विसर गियोसे, मतलब सुध थयोसे।
हासिल आ थियोसे सारा, जो कुझ आप मंगियोसे।
सूद ज़ियान कनूं मियाँ, सचल हुण ता छुट पयोसे॥

36. सुहणियां नाल न हुजत काई, पा पलउ कर ज़ारी।
रूबरू खड़ बाँहां बध के, घत गिची विच गारी।
सचल शाल निबाह निवीजे, नाल यारां दी यारी!

37. मुल्ला, छोड़ किताबां, पीवें मइ दी हिक प्याली,
पलक तहें विच क़ाज़ी, थीवें मस्तान मस्त मव्वाली।
सचल सबक़ विसार कराहुण, होवें मुहब्बत वाली॥

38. मुख महताब सजण दा सुनियाँ, घूँघट विच लुकायुसि।
डूंहे नूर तिजले डींदे, क्यों वत आप छुपायुसि।
ज़ाहिर बातिन सोई आहा, बाज़ी भेद बनायुसि।
चश्मां दे चमकारे लुकदे, लाशक बिरहा लायुसि।
सूरत विचूँ मूरत बण के, सचल नाम सदायुसि॥

34. वह दिलबर हसीन हमेशा साथ है, खिलता-हँसता है।
पल भर हमसे दूर न होता आँखों में वह बसता है॥
और कोई काम उसे ना आता, बस, हँस-हँसकर मन हरता है।
सचल! तू हमसे प्रीति निभाना यही एक बात वह कहता है॥

35. इश्क़ हुआ, घर-बार भी भूला, मतलब पूरा हो गया।
जो कुछ भी माँगा था मैंने, वह सब हासिल हो गया।
फ़ायदे नुक़सान का फ़िक्र नहीं, सचल, छुटकारा हो गया॥

36. हसीन यार से हुज्जत* कर मत, झोली फैला उससे अर्ज़ कर।
हाथ जोड़ हो खड़ा सामने, अदब से यार को तू राज़ी कर।
सचल, काश! तेरी यार से यारी, निभ जाए हरदम सिर झुकाकर॥

37. छोड़ किताबें, जाम इस मय का, पियो मुल्ला!
जाम इसका गर एक भी ऐ काज़ी! पियो तो तुम मदहोश हो जाओ।
सचल, पियो तो सबक़ नफ़रत का भूल प्यार के पैरोकार† हो जाओ॥

38. चाँद-सा मुखड़ा सुना साजन का, घूँघट में उसने छिपा लिया।
नयन बेहद चमकीले दिखते, क्यों फिर उसने छिपा लिये॥
वही सामने, वही छिपा है, फ़र्क़ यह उसके खेल से आया।
चमक उन नयनों की छिप जाती, तभी तो उसने बिरह जगाया।
निर्गुण से सगुण हो ख़ुद को सचल कहलवाकर बुलवाया॥

* विवाद, बहस † वक़ील, समर्थक

39. क़ाज़ियाँ, केहे मसइले करीन्दएं ?
इश्क़ शरअ क्या लगे लगे,
दोज़ख़ बहिश्त दे डे न दड़के,
भव असां कनूं भगे भगे,
बाब बिरह दा कोई न पढ़दएं,
काग़ज़ लिखदएं बगे बगे,
मुल्लाँ दी दौड़ मसीतें ताईं,
इश्क़ दी मंज़िल अगे अगे,
सचू है मिस्कीन निमाणा,
तोह तेड़े नाल तगे तगे॥

40. हर्फ़ु हलालु हेकिड़ो, बिया सभु हर्फ़ हरामु,
आशिक़नि अंजामु, इहो आइ अजीब सां।

39. कैसे मसले क़ाज़ी! खड़े तू करता है ?
इसलामी क़ानून क्या इश्क़ में चलता है ?
दोज़ख़-बहिश्त की हमें तू धमकी मत दे।
ख़ौफ़ तो डरकर दूर भाग जाता है हमसे॥
बाब* तो बिरहा का नहीं कोई पढ़ता है तू।
सफ़ेद-सफ़ेद काग़ज़, बस, काले करता है तू॥
दौड़ तो मुल्ला की वहीं तक जहाँ है मस्जिद।
मस्जिद से पर कहीं आगे है इश्क़ की मंज़िल॥
मिस्कीन है, बड़ा निमाना है यह सचल बिचारा।
मालिक! इसकी ज़िन्दगी का तेरी मेहर सहारा॥

40. पाक तो है हर्फ़† सिर्फ़ एक ही, बाक़ी हैं सब हर्फ़ नापाक।
आशिक़ पहुँचे इस अंजाम पर, अजीब बहुत लगती यह बात॥

* अध्याय, प्रकरण † अरबी-फ़ारसी की वर्णमाला का पहला अक्षर 'अलिफ़' जिसका प्रयोग सूफ़ी दरवेशों ने 'अल्लाह' के प्रतीक के रूप में किया है।

रब्बी राह

1. मार्गु मथाहों थियो, मार्गु चढ़े केर?
सा पुछे साथु सवेर, जा ई मार्ग ते मरे।

2. जे तूं मार्ग ते मरीं, वड़ा ताल्अि तो,
सांवल सागी सो, मथां तो हथ मढ़े।

3. मार्ग मरणु आहि, घोरियो जीअणु जेड़ियूं!
पेर न पोइयां पाइ, आशिक़! मरु अगे थिएं।

4. मार्ग मरां शाल, दुआ करेजो, जेड़ियूं,
होत हहिड़े हाल, मान मथां मूं हथु थिए।

5. मल्ही मार्ग मरु, तां तूं तिनीं जी थिएं,
जबलि हारि न जरु, अर्तो अखिड़ियुनि मूं।

इस कलाम में बताया गया है कि परमात्मा तक पहुँचानेवाला मार्ग बड़ा विचित्र और कठिन है। इस पर चलने के लिये किसी पूरे गुरु से मार्गदर्शन लेना आवश्यक है। फिर इस मार्ग को अपनाने वाले प्रेमी भक्त को अपनी ख़ुदी यानी अहंकार को मिटा देना पड़ता है। ख़ुदी के न रहने पर प्रियतम प्रभु का रहमत भरा हाथ सदा भक्त के सिर पर रहता है।

यह भी ज़रूरी है कि इस कठिन राह पर ध्यान की एकाग्रता सदा बनी रहे और परमात्मा से मिलाप का मक़सद सदा सामने रहे।

1. बहुत ही ऊँची राह है वह तो, कौन है जो उस पर चढ़ सकता।
वो पूछे जल्दी* इस रहनुमा का पता, जिसने मर मिटना हो इस राह पर॥

2. ख़ुदी गर ख़त्म करे राह चलते, ख़ुद को जान बड़ा ख़ुशकिस्मत।
रहमत-भरा उस दिलबर का तब हाथ रहेगा तेरे सिर पर॥

3. राह यह सखियो! क़ुर्बानी की, है ख़ुदी ख़त्म कर देने की।
हटाना पैर न पीछे आशिक़! राह मरकर आगे बढ़ने की॥

4. दुआ तुम सखियो! ख़ुदा से करना, ख़ुदी ख़त्म कर दूँ इस राह पर।
काश! हाल हो मेरा ऐसा, हाथ वह रख दे मेरे सिर पर॥

5. हिम्मत कर गर ख़ुदी मिटा दे दिलबर का हो जाएगा।
गिरा न पानी तू पहाड़ पर, हाथ नहीं कुछ आएगा।
बहा आँखों से ख़ून के आँसू, काम तेरा हो जाएगा॥

* मनुष्य जन्म में

6. पिरियां संदे पार डे, पंधु अजाइबु आहि,
घोरे सिरु घुमाइ, मथे दरि दोस जे।

7. पंधु अजाइबु पिरींअ जो, आहि हलण सां हालु,
फ़िक्र साँ फ़िलहालु, वञी पसंदींअ पिरींअ खे।

8. पंधु अजाइबु पिरींअ जो, सिसी पेर करणु,
इन्हीअ ध्यानु धरणु, आहे क़दमु केच डे।

9. पंधु अजाइबु पिरींअ जो, ''मां'' सां कीन हले,
साई चाह चले, जंहिं ''मां'' छड़ी विच में।

10. पंधु अजाइबु पिरींअ जो, हलणु हिक नज़रि,
पाड़ेची! कंहिं परि, इहो ख़्यालु खड़ो थिए।

6. राह अनोखी जानो तुम वह, पास ले जाती जो दिलबर के।
उस राह पर जो चलें, ख़ुदी वे धर देते दर पर दिलबर के॥

7. राह अजब दिलबर के घर की, जानेगा उस पर जो चलेगा।
ध्यान अगर तू करेगा उसका, अन्दर जा दीदार करेगा॥

8. राह अजब दिलबर के घर की, सिर के बल है चलना पड़ता।
रहे ध्यान में बात अगर यह, तभी उस ओर क़दम है बढ़ता॥

9. राह अजब दिलबर के घर की, करे जो ''मैं-मैं'', चल ना सकेगा।
शौक़ उसे ले जाएगा जो मन से ''मैं'' को बाहर करेगा॥

10. राह अजब दिलबर के घर की, मक़सद नज़र में रखना पड़ता।
सोच ऐ साथी! ज़रा, ध्यान को कैसे टिकाया है जा सकता॥

जोगी

1. धूणीअ मंझि ध्यानु, आहे आधूतनि जो,
गुमु थी गुर गम गोदिड़िया कनि गिरोड़ी ज्ञानु,
असुल खां इश्नानु, गंगा जमुना तिनि जो।

2. करे लंघिया लोक मां, लाहूती* लोड़ा,
घोड़ा ड़े घोड़ा, करे मनु मस्तानु विया।

3. जोगी जाल डिठामि, पर को को लभे कापड़ी,
ही वेही वस्तुनि में विया, हू न लोक लड़ियामि,
तिनीं काणि थियामि, हइ! हइ! हहिड़ा हालड़ा।

* लाहूत में पहुँचे हुए। मन के कार्यक्षेत्र से ऊपर के मंडल को सूफ़ियों ने 'लाहूत' कहा है।

इस कलाम में हमें सावधान किया गया है कि भेषधारी दिखावटी योगी तो बहुत हैं जो असल में भोग-विलास में मग्न रहते हैं, परंतु संसार से सचमुच विरक्त योगी विरले ही मिलते हैं। वे जानते हैं कि प्रभु का निवास-स्थान शरीर के अंदर ही है, इसलिये वे अंतर्मुखी भक्ति में लीन रहते हैं। वे प्रभु के सच्चे नाम के, दिव्य धुन के उपासक होते हैं। इसको सुनना ही उनका गंगा-जमुना में स्नान करना होता है। शब्द को सुनने का अभ्यास करके वे मन और माया के दायरे से ऊपर उठ जाते हैं। प्रभु से उनका प्रेम इतना गहरा होता है कि वे प्रभु-प्राप्ति के लिये प्राण न्योछावर कर देने से भी नहीं हिचकिचाते।

1. धूनी जो जगाते जोगी*, ध्यान उसी में रखते हैं।
ये हैं फ़क़ीर, जो गुरु समझाया होकर मग्न वही वे करते हैं॥
हुए मग्न तभी तो प्राप्त, ज्ञान आत्मिक वो करते हैं।
असली गंगा-जमुना के संगम में, स्नान† वे जोगी करते हैं॥

2. गुज़रे हैं दुनिया में से कुछ ऐसे जोगी मन की हद के पार हैं जो चले गए।
गाते मीठे गीत यहाँ से गुज़रें वे, दिल मस्त इश्क़ में हाय! मेरा वे कर गए॥

3. झूठे जोगी कई दिख जाते, सच्चा कोई-कोई मिलता।
झूठा जग में फँसा रह जाता, वह इस तरफ़ नहीं है खिंचता।
इसीलिये हाय! हाल यह मेरा, उसी की खोज में हूँ मैं फिरता॥

* अंतर में ज्योति जगाने से अभिप्राय है जोगियों का सच्चा तीर्थ स्नान है।

† दीक्षा मिलने के बाद अंतर में दिव्य धुन को सुनना

4. लाहूती मां लोक, थोरा घणा लंघिया,
सचल सामीअड़नि ते, मुहबत वसी मोक,
से ज़ाबिर मंझां ज़ौक़, कंधु ड्यिनि था कात ते।

5. विर्लो वेरागी, ज्ञानी ड्ठुमि गोदिड़ियो,
भुलिया ड्ठमि भीर में, भोगी ऐं भागी,
तालिबु त्यागी, लखनि में को हिकिड़ो।

6. जोगियुनि जटाऊं, जोड़े जड़ियू जानि ते,
चिमिटा बई चेल्हि ते, तुंबियूं तणियाऊं,
जंजीरुनि सां जानि ते, किश्ता कड़ियाऊं,
गिरोड़ी गाऊं, पूरब पंधु पुछी विया।

7. महादेवु जिनि मन में, पूजारियुनि तिनि परख,
अठई पहर अंदर में, लखनि लिख अलख,
रखी विया राज़ ते, कापड़ी से कख,
जहानु मारे जख, हू पूजा में पुरि रहिया।

8. पूजारी जे पारखू, महादेवु तिनि मनि,
गंगा गुमु रहनि, बुधनि ड्सनि कीन की।

4. गुज़रे हैं दुनिया में से कुछ ऐसे जोगी, मन की हद को पार जिन्होंने कर लिया।
कहता है यह सचल, इश्क़ जब बरसा उन पर, निहाल उसने उन जोगियों को कर दिया।
बड़ी ख़ुशी से उन बहादुर जोगियों ने धार पर गँड़ासे की सिर तब धर दिया॥

5. गुदड़ीधारी जोगी वे विरले जो ज्ञानी हैं, वैरागी हैं।
जोगी गुमराह बहुत-से देखे जो धनी बने हैं, भोगी हैं।
लाखों में कोई एक ही मिलता जो त्यागी है, जिज्ञासु है॥

6. बाँध जटाएँ लपेटें तन पर, चिमटा, तूँबा कमर से लटके।
ज़ंजीर से बँधा कमण्डल तन से, जोगी ऐसा रूप हैं रचते।
सयाने पूछ वह राह पुरानी अपने देश को हैं चल पड़ते॥

7. प्रभु का वास जिन भक्तों के मन में, सच-झूठ की परख वे रखते।
आठों पहर वे अपने अन्दर उस अलख के दर्शन करते॥
त्यागी हैं वे, राज़ को राज़ ही रखते हैं, ढक रखते हैं।
लोग तो हैं झख मारते रहते, पर भक्ति में मग्न वे रहते हैं॥

8. भक्त सच-झूठ के पारखी हों तो प्रभु बसता है मन में उनके।
गंगा* में ही डूबे रहते, ना कुछ देखते, ना कुछ सुनते॥

---

* शब्दरूपी गंगा

9. अञा आधूती, आहिनि अकीचार,
अविद्या अहंकार, भञी जिनि भोरा कया।

10. पूरब पेर धरिनि, कनि विछट पराहें पंध ते,
क़दमु रखी कात ते, कंधु क़ुर्बानु करिनि,
कोड़ूं कापड़िनि, सचल सिरु सदिके कयो।

11. मथे कात क़दमु, काकियूं! कापड़ियुनि जो,
संसो मिटे सरूप में, सचल थिया से समु,
सदा सामियड़नि जो, दमामियुनि साँ दमु,
आदेसी अदमु, थिया नाले अंदरि नाथ जे।

12. कापड़ी मूं काल, अञा डिठा डेह में,
हइ! हइ! मुंहिंजे हाल, जो साणुनि थियुसि न संगिती।

13. लाती लाहूतियुनि, धरम जी धूणी,
पंब जी पूणी, मंझि साड़े सनासी हलिया।

9. फ़क़ीर अभी भी बहुत-से ऐसे, हमें दुनिया में हैं मिल जाते।
अहंकार अज्ञान जिन्होंने अपने चूर-चूर हैं कर डाले॥

10. दूर ले जाती हैं राहें पूर्व की, सफ़र उन पर जोगी फिर भी करते हैं।
सिर कटवा देते हैं वे प्यार में, और गँड़ासे पर क़दम जा धरते हैं।
आरज़ू अल्लाह से मिलने की, सचल, सिर निछावर करते हैं॥

11. सुनो बुज़ुर्गो! निधड़क क़दम अपना रख देते जाकर गँड़ासे पर भी जोगी।
सचल, ना शक रह जाता उनको कोई, एकरूप जब प्रभु से हो जाते हैं जोगी॥
नगाड़े* में रहते सदा प्राण उनके, उसी एक हुक्म में रहते हैं जोगी।
नाम में उस मालिक के अपने ही अन्दर विलीन वे हो जाते हैं जोगी॥

12. वैरागी संसार में देखे पहले भी, दिखते हैं अब भी।
अफ़सोस मुझे इस बात का है कि अब तक नहीं उनकी संगति की॥

13. अन्तर में जिन्होंने धर्म की धूनी जलाई, मन की हद के पार गए हैं वे ही जोगी।
जला दिया अहंकार, हो जैसे रूई की पूनी, और चले गए निज-घर वे संन्यासी जोगी॥

* अंतर में सुनाई देनेवाली धुन की ओर संकेत है

14. आहीनि अकीचार, अन्तर्मुख आधूत,
पूरब से न पुरिया, नकी कनि प्रचारु,
अठ ई पहर अछ* में, रहनि से गुम ग़ार,
सचल संस्कार, संसा तिनि विञाइया।

15. जोगी भातों भाति, पर मुंहिंजो आधूतिनि सां,
सफ़रि विया साझुरे, रहिया रुगी राति,
तलब तिनीं जी ताति, रातियां डींहां रूह खे।

* समुद्र, यहाँ भक्ति के समुद्र से अभिप्राय है

14. अब भी हैं अनेक जो, ध्यान अपना अन्दर हैं रखते।
पूर्व में तीर्थों को नहीं जाते, प्रचार भी वे नहीं हैं करते॥
गुफा में तन की छिप जाते हैं, सदा भक्ति में लीन वे रहते हैं।
संस्कार ऐसे हो जाते हैं सचल कि शक ना कोई रह जाते हैं॥

15. जोगी तरह-तरह के मिलते, पर लगाव फ़क़ीरों से मेरा।
एक रात ही रुके यहाँ वे, चले गए जब हुआ सवेरा।
चाहत में उनकी संगति की रात-दिन अब तड़पे दिल मेरा॥

मन-मंदिर

1. मंदरु करे मन खे, पूजारी! पूजाइ,
पारु न बियो पुछाइ, पूजारिया! पुरबंदर* जा।

2. पाण पूजारी पांहिंजो, पंहिंजो पूजारी पाणु,
जाण इन्हीअ जी जाणु, जाणु न जाणी जाण खे।

3. सीने में सनमु, सचल खे सदा,
बुत जो बुतु ख़ुदा, पूजारी! जे परखिएं।

4. सचल खे सदा, सीने में सनमु,
कोन्हेसि बियो को कमु, पथर जे पूजा बिना।

5. छडे पचर पांहिंजी, था काहिंनि क़ाफ़ूं क़ाफ़
करे काबो क़ल्ब खे, तालिब कनि तवाफ़,
लाहे ग़ैर ग़िलाफ़, नूरी वञी नूरु थिया।

6. दमु नफ़्सक जी सचल सची, राह न जाणनि मूढ़ा।
हस्ती वारा कोट बणाइनि, कुंगरा रखनि कूड़ा।
सचा राह उहे ही लहन्दा, गाल्हाइंदा जे गूढ़ा।

* एक तीर्थ-स्थान, आज का पोरबन्दर

सचल साहिब जिज्ञासु को अपने मन को ही प्रभु का मंदिर और क़ाबा बना लेने की सलाह देते हैं। वे कहते हैं कि परमात्मा का वह गुप्त नाम जो हर एक के अंदर है, प्रभु को पाने की सच्ची राह है। मन ही मन प्रभु की पूजा अर्थात् अंतर्मुखी भक्ति करने के लिये संसार के पदार्थों का मोह और अहंकार त्यागना आवश्यक है। जब जिज्ञासु मन पर पड़ा द्वैत अथवा अहंभाव का ग़िलाफ़ उतार फेंकता है, तभी वह इस योग्य होता है कि प्रभु के पास वापस जाकर उसका रूप हो जाए।

1. मन को मन्दिर बना पुजारी! उसी में अब तू कर पूजा।
ऐ पुजारी! पोरबन्दर का रास्ता पूछ ना अब दूजा॥

2. ख़ुद ही पुजारी है वह अपना, ख़ुद ही ख़ुद को है वह पूजता।
समझ ले तू, जो जाननहार है, उसे अभी तू है ना जानता॥

3. जान ले तू यह, सचल के दिल में रहता हमेशा दिलबर ही है।
पहचान ले गर तन अंदर जाकर तो तन यह, पुजारी! उसी का मन्दिर है॥

4. जान ले तू यह, सचल के दिल में रहता हमेशा दिलबर ही है।
पत्थर की पूजा के सिवा, औरों को कोई काम नहीं है॥

5. छोड़कर अपनी मैं को तालिब दुनिया भर में तलाश करता।
तालिब, मन को बना काबा परिक्रमा है उसकी करता॥
दुई का गिलाफ़ उतार, नूरे ख़ुदा में समा गये॥

6. मन की कुल ताक़त, राह रब की, मूरख दोनों ही ना जानें।
क़िले वे कच्चे बुर्जों वाले झूठी हस्ती के ही बना लें।
अन्दर अजपा जाप करें जो, सचल कहे, राह सच्ची पा लें॥

विरह

1. असां ग़रीबां दे नालि, दिलबर चङड़ी कीतोई।
अगे पिछे हे गल तुसांडे, जीवें वणेई तीवें पाल॥
'नंहनु अक़रबु' इहा इशारत, वरक़ हिजर दा वाल।
सचल कौन है उम्र सभाई, जो शान दे विच जाल॥

2. तेडा दरसन पावणा वे, हुण निमाणी नूँ मियाँ!
जो करीसां, हुण करीसां, वल इथां नहीं आवणावे!
बार बिरह दा बारी आहा, सिर असां ता चावणावे!
सवाल सचू दा अगूं साईयां दे, सारा अर्ज़ सुणावणावे!

3. जानी जवाब न डेंदां, अर्ज़ असांडे दा साईं।
जे मैं आखां हाल हिजर दा, ता भी ओ न अलेंदा॥
पांद गिचीअ विच जे मैं पावां, झिणकां डे झलेंदा।
हथ भी बधां पैरं भी पवां, तडां भी नाल न नेंदा।
सुनो सुनयां गाल्ही मुहब दियां, मारी बेचारी कूं वेंदा॥

नीचे दी जा रही कविताओं में प्रभु के प्रेम में व्याकुल सचल साहिब द्वारा किया गया अपनी विरह-व्यथा का वर्णन दिल को हिला देनेवाला है। पाँचवीं कविता में, जिसका काव्यात्मक सौंदर्य देखते ही बनता है, "मुखड़ा वखाली तूं हिकवारी, मैं हिजरां दी मारी-मारी" पढ़कर तो किसी भी सहृदय पाठक के आँसू छलक आएँगे।

1. मुझ ग़रीब का तूने दिलबर! अच्छा यह कर दिया है हाल।
किया है तूने, तू ही करेगा, अब जैसे भी हो, कर सँभाल॥
यही इशारा 'बहुत क़रीब' वह, वरक़* बिरह का तू उलटा।
इतनी उम्र पड़ी नहीं मेरी, जो अकड़ में, सचल, तू दे बिता॥

2. मुझ निमानी को तो मालिक! अभी तेरा दर्शन पाना है।
जो करना है, अभी करना है, फिर तो यहाँ नहीं आना है॥
बोझ बिरह का भारी है, पर सिर पर तो मैं उठाऊँगी।
अर्ज़ सचल की मालिक से है, मैं पूरी बात सुनाऊँगी॥

3. मेरा दिलबर, साईं वह, मेरी अर्ज़ का जवाब न देता।
कहूँ जो हाल बिरह का अपने, तो चुप्पी साध वह लेता।
पल्लू फैला अर्ज़ करूँ तो दे डाँट मना कर देता॥
हाथ भी जोड़ूँ, पैर भी पकड़ूँ, तो भी साथ न ले जाता।
सुना यही महबूब के बारे, बेबस को मार चला जाता॥

---

* पन्ना

4. नाल ड़ाढे दे यारी, लग़ड़ी रोज़ अज़ल कनूं।
बांहाँ ब़ध के पेश पोवां मैं, नाल साईयां दे ज़ारी॥
इल्मु अक़ुल ते शर्म हया कनूं, इश्क़ कीती बेज़ारी।
अपणी मर्ज़ी नाल असां ख़ुद, बिरह चातोसे बारी॥
अड़ग असांड़े नाल करम दे, आ तूं सज़ण हिकवारी।
इश्क़ तेड़े दी दिल मेड़े ते, असल कनूं मुख़तारी।
तेकूं हे मालूम, ऐ प्यारा, ग़ाल्ह सचल दी सारी॥

5. तेड़े दर मेड़ी ज़ारी ज़ारी, अला अला लख वारी वारी।
मैं निमाणी ऐबें हाणी, तार तुसांड़े तारी तारी॥
नाल तुसादे रोज़ अज़ल कनूं, यार असांड़ी यारी यारी।
हाल असांड़े दी दिलबर साईं, सुध तुसाकूं सारी सारी॥
मुखड़ा वखालीं तूं हिकवारी, मैं हिजरां दी मारी मारी।
सग सचल हे दर तेड़े दा, ग़ल तहीं कूं ग़ारी ग़ारी॥

4. उस ज़ोरावर* संग तो मेरी रोज़े अज़ल से यारी है।
जोड़े हाथ जाऊँ साईं आगे, होती अर्ज़ यही मेरी है॥
शर्म, हया, इल्म, अक़्ल, इन सबसे इश्क़ ने बेरुख़ कर रखा है।
भारी बोझ बिरह का अपनी ख़ुशी से मैंने उठा रखा है॥
दया कर, दया कर, आँगन मेरे एक बार तो आ तू दिलबर।
शुरू से चला आता है कब्ज़ा इश्क़ तेरे का मेरे दिल पर।
हाल तो तुझ को पता है सारा सचल का मेरे प्यारे दिलबर॥

5. अर्ज़ करूँ दर तेरे, मैं अर्ज़ करूँ, लाख बार ऐ अल्लाह! वारी मैं वारी।
अनगिनत हैं ऐब मुझ निमानी में, तेरी रहमत का ही पल-पल ध्यान करूँ॥
तेरे साथ तो रोज़े अज़ल से ऐ यार मेरे! यारी है, मेरी यारी है।
मेरी हालत की ऐ मालिक! दिलबर मेरे! ख़बर तो तुझको सारी है, हाँ, सारी है॥
एक बार तो दिखा दे मुखड़ा, यह निमानी बिरह की मारी, बिरहा मारी है।
सचल है तेरे दर का कुत्ता, मिलती उसको गाली है, हाँ गाली है॥

* सर्वशक्तिमान् परमात्मा

विनती

1. सुहणा साईं बख़्श असांनूं, जो कोइ ड॒ोह कीतोसे।
नाम ख़ुदा दे अफों करीं, जो तेड॒े नींहं नीतोसे॥
पलउ तुसांड॒ा रोज़ अजल कनूं, दिलबर दस्त लीतोसे।
अपणा ज॒ाण सचल कूँ सुहणा, तेकूं पलउ घतयोसे॥

2. पलव तुसांड॒े पयाँ मैं पलव तुसांड॒े पियाँ।
अवगु॒ण ड॒हूँ ड॒ेख न मेड॒े, हाल कनूं हुण गि॒याँ॥
इश्क़ दा प्याला पी कराहुण, ऐवें दीवानी थियां।
ताने तुहमत ड॒ेवन मैंनूं, रल मिल सियालें सुनियां।
अड॒ण सचू दे आव प्यारा, बिरह तुसांड॒ड़े लेइआं॥

3. मैं मन्दी, मैं मन्दी, कीवें सड॒ावां हुण बन्दी।
तौबा तौबा ते इस्तिग़फ़ार, गि॒ची पातोसे गन्दी॥
इहीं ग॒ाल्हूँ काई मुदत दिल ते, रही हे दर्दमन्दी।
ब॒ाझूँ साइयां दे हुण सचू वे, कार न ब॒ी काई कन्दी॥

4. रोज़ अज़ल खां अब्द ताईं, अथम गि॒चीअ ग॒ल ग॒ानी।
ड॒ोह ड॒िंगायूं ड॒िसु न मुंहिंजियूँ, मुहब करियो महरबानी।
कीअं सचूअ जी दिलड़ी दिलबर, दोस्त कयव दीवानी।

इन कविताओं में सचल साहिब ने बार-बार अपने गुनहगार होने का उल्लेख किया है। वे दीनतापूर्वक गिड़गिड़ाते हुए कहीं प्रभु से और कहीं सतगुरु से अपने गुनाहों के लिये बार-बार माफ़ी माँगते हैं और अपनी विरह-व्यथा मिटाने के लिये दर्द-भरी प्रार्थना करते हैं।

1. ऐ मेरे मालिक! हसीन दिलबर! बख़्श सब गुनाह जो किये हैं मैंने।
ख़ुदा के नाम पर गुनाह वे माफ़ कर तेरे प्यार में किये जो मैंने॥
पल्ला तेरा पहले दिन से* दिलबर! पकड़ रखा है मैंने।
अपना समझ सचल को दिलबर! पल्ला पसार रखा है मैंने॥

2. दामन तेरा पकड़ लिया है, दामन अब तेरा पकड़ लिया।
ऐब गुनाह तू देख ना मेरे, अब तो हो बेहाल गया॥
जामे इश्क़ पीते जो, तड़पते, दीवाना मैं भी यों ही हुआ।
अपने मिल अब ताने देते, इलज़ाम सिर मढ़ते, सुना सहा।
सचल के आँगन में आ प्यारे! उसे बेहद सताए तेरा बिरहा॥

3. गुनहगार हूँ, गुनहगार हूँ, किस तरह ग़ुलाम कहलाऊँ अब।
तोबा करूँ मैं, तोबा मेरी, गुनाहों की माफ़ी माँगूँ अब॥
ग़लाज़त से भरी हूँ, बात यही बड़ी देर से है दिल को सता रही।
सचल का अब मालिक ही सहारा, सिवा इबादत के कोई काम नहीं॥

4. रोज़े अज़ल† से रही हूँ अब तक, अर्ज़ गुज़ार‡ बन सामने हाज़िर।
ऐब गुनाह तू देख ना मेरे, रहम कर अब तो मुझ पर दिलबर।
दिल कैसा कर दिया दीवाना, सचल का मेरे यार। मेरे दिलबर॥

---

* जिस दिन तेरी शरण में आया था † सृष्टि के आरंभ से ‡ ज्ञानी

5. अमन दे विच रख यार सुहणे दी, अल्लाह संगत सारी!
तंहिं दे नाल असां डी आहे, यकदल या रब यारी।
दोस्ती दे विच पुछीं जे मैं कूँ, सचल रखण सचारी॥

6. ज़ारी, सज्ण, लख ज़ारी, मेड़ी तेड़े नाल।
नाल तुसा डे मेड़ी यारी, जीवें वणेई तीवें पाल॥
आखां यार तेनूं हिकवारी, तेड़ी गुझड़ी गाल।
मेड़ी तेकूं हे सुध सारी, वर्क़ हिजर दा वाल॥
अज़ल कनूं मेड़े गल विच गारी, आव साड़े गड़े जाल।
सचल हे सग दर तेड़े दा, दोस्त सिघा ग़म टाल॥

7. देस असांड़े आवें, यार पियारल वे मियां*।
रहीं असांड़े दिलबर नेड़े, दूर न साथूं जावीं॥
अड्ण निमाणी दे, सुहणा साईं, पेर सघेरा पावीं।
तुसां बाझूँ नित फिरां बेराग्ण, चिर ता वत क्यों लावीं।
नांउ अल्लाह दे थीवां ऐलाज़ण, चित सचल तूं न चावीं॥

8. नँगड़ा निमाणी दा, जीवें तीवें पालणा।
मैली हां या मन्दी हां, बेशक तेड़ी बन्दी हां॥
ढकीं मेड़ा ढोलणा, मेड़े ऐब न फोलणा।
पई हां तेड़े पनारे, लगी हां तेड़े लारे॥
तेड़ी ज़ात सतारी, डोह न मेड़े गोलणा।
नाल कोझी दे जालणा, असां कने वल आवणा।
यार सचल तूं लहिन कशाले, घूंघट अपणा खोलणा॥

* यहाँ अभिप्राय ख़ुदा के दूत मुर्शिद से है

5. मेरे हसीन दिलबर* की या रब! सुखी रख, ख़ुश रख संगत सारी।
दिलबर के ही साथ है मेरी, या अल्लाह! अब यकदिल यारी।
पूछे जो मुझसे तो कहूँगा, सचल रखता है सच्ची यारी॥

6. बिनती तुझसे करती हूँ, साजन! बिनती करती हूँ लख बार।
तेरे साथ है मेरी यारी, जैसे चाहे, तू ले सँभाल॥
राज़ की बात जो कही थी तूने, एक बार दिला दूँ याद तुझे।
मेरी तुझको ख़बर है सारी, मेरे बिरह का वरक़† उलट दे॥
शुरू से मेरे गले में फन्दा, आ, हमेशा साथ अब रह तू।
सचल है तेरे दर का कुत्ता, यार! दर्द इसका जल्द मिटा तू॥

7. ऐ मेरे मुर्शिद! दिलबर प्यारे! देस मेरे अब आ जाओ।
क़रीब ही मेरे रहो अब दिलबर, दूर ना मुझसे तुम जाओ॥
मुझ ग़रीब के आँगन में अब साईं! क़दम रख दो जल्दी।
मैं बैरागिन भटकूँ तुम बिन, तुम क्यों लाई देरी।
अल्लाह का वास्ता, दिल न हटाना सचल कहे, यह बिनती मेरी॥

8. निमानी हूँ मैं, जैसे भी हो, लाज तू रख लेना मेरी।
गुनहगार हूँ या बद हूँ मैं, पर ग़ुलाम ही हूँ तेरी॥
मेरे ऐबों पर तो दिलबर! तू परदा ही डालना।
ऐबों से मैं भरी हुई हूँ, एक-एक कर ना तलाशना॥
शरण में तेरी आ गई हूँ मैं, ले ली अब पनाह तेरी।
ढूँढ़ना नहीं क़सूर तू मेरे, रहमत है फ़ितरत तेरी॥
बदशक्ल हूँ, मगर निभाना तू, पास तू मेरे आ जाना।
मिटें सचल के दुखड़े सारे, मुखड़ा अब ना छिपा रखना॥

* महबूब यानी प्यारा सतगुरु † पन्ना

काफ़ी

1. बात बिरह दी एही एही अजब जेही।

मिल माशूक़ां मसलहत कीती, आशिक़ क़त्ल करसियूं।
क़त्ल कनूँ जो पिछे तहँ कूं, शहर ढिंढोरे डेसूं।
कनूँ ढिंढोरे पिछे तहँ कूं, लहरें विच लुढ़सियूं।
लहर कनूँ जो बाहर आया, रम्ज़ इहें दी ज़ेही एही अजब जेही।

लहर कनूँ पिछे तहँ कूँ, आतिश विच सटेसूं।
आतिश विच जो सट तहें कूँ, फूक अड़ाह मचसियूं।
फूक अड़ाह मचा तहें दी वाईं ख़ाक उडेसूं।
ख़ाक आशिक़ दी अखियां दे विच, सुरमा जोड़ के पसियूं।
आशिक़ सो जो सुरमा थीवे, गाल्हि उन्हीं दी केही, एही अजब जेही।

आशिक़ी का शौक क़ाबिले तारीफ़ है, लेकिन इश्क़ की राह आसान नहीं है, आशिक़ी के इम्तिहान में से गुज़रना आग के दरिया को पार करना है। सचल साहिब अंदरूनी आशिक़ी के जिस दौर से गुज़रे, उसका बयान उन्होंने इस काफ़ी में किया है। माशूक़ की जुदाई में आशिक़ महसूस करता है कि उसे न सिर्फ़ क़त्ल ही किया गया है, बल्कि उसके जिस्म के टुकड़े-टुकड़े करके आग के दरिया में झोंक दिया गया है। जब वह निकलने की कोशिश करता है, उसे पीट-पीटकर फिर से डुबो दिया जाता है। आख़िर माशूक आशिक़ के साथ ऐसा करता क्यों है? इसलिये कि उसे खान से निकले सोने की तरह पहले छानकर, फिर तपाकर, कुंदन बनाकर अपने गले का हार बनाना है। इसी लिये आशिक़ को अंगीकार होने से पहले विरह अग्नि में तपकर दु:ख, दर्द और बेकरारी की पीड़ा में तड़पना ही पड़ता है। आख़िर में सचल साहिब कहते हैं कि माशूक़ के इश्क़ ने उन्हें आशिक़ बनाया। ऐसी आशिक़ी में हम उसके हो गए और वह हमारा हो गया। इश्क़ एक अजीब जज़्बा है, बेहद अजीब जज़्बा।

1. ऐसी ही है बात बिरह की। बहुत अजब है बात बिरह की॥

सुना है, माशूक़ों ने सलाह की, क़त्ल आशिक़ को कर देंगे।
उसे क़त्ल करने के बाद हम, जा शहर में डौंडी पीटेंगे।
डौंडी पीटेंगे, आशिक़ को फिर बहा लहरों में देंगे।
लहरों में से निकल आया तो सोचते हैं अब, क्या करेंगे।
भेद-भरी है बात बिरह की। बहुत अजब है बात बिरह की॥

लहरों में से निकल आया तो फैंक आग में उसको हम देंगे।
उसे आग में फेंक भट्टी को दहका फुकनी से हम लेंगे।
भट्टी को दहका आशिक़ की उड़ा ख़ाक हवा में हम देंगे।
ख़ाक उसकी सुरमे की तरह फिर डाल आँखों में हम लेंगे।
आशिक़ वही जो हो जाए सुरमा यह बात है उसकी किस तरह की।
बड़ी अजब है बात बिरह की॥

सुनियां सुबह दे वेले, आशिक़ पकड़ के तैयार करेसूं।
शबाशब तहीं दे पिछूं, फ़ौजा हसन चढ़सियूं।
विच लतां दे आशिक़ शोदा, क़ाबू क़ैद करेसूं।
अव्वल हुशियां डेकर पिछे, ऐ मनसूबा चलेसूं।
नाल तहीं दें जेही वणी, आपे करसूं तेही, एही अजब जेही।

चलो वे सुनियां आशिक़ कीते, सुरहा मेट मलेसूं।
विच दरिया लोहू दे तहें कूँ, धूपां नाल धोसियूं।
धोपें नाल धुवा तहीं कूं, ग़ोते ख़ूब डिवेसूं।
ग़ोते कनूं जो पुछे तहं कूं, डेकर लत बुड़ेसूं।
बुडन कनूं जो बाहर आया, गाल्हि करीजे केही, एही अजब जेही।

रंगा रंग नक़ाशी वाला, महला एक बनेसूं।
हडे गडे तहिं आशिक़ दे, वत थम्भे काम करेसूं।
चार ई बाजू करके डाके, पूड़ी जोड़ जुड़ेसूं।
सिर आशिक़ दा तहिं दे उतूं, दिके दरस धरेसूं।
ख़ून दी क़ीमत असां थियोसे, क़त्ल थिया परडेही, एही अजब जेही।

रातों-रात हम उसके पीछे, हसन*-सी फ़ौज लगा देंगे।
सुबह ही उसको धर लेंगे और तैयार उसे हम कर लेंगे।
उस बिचारे की टाँगों में ज़ंजीरें हम पहना देंगे।
पहले उसे जोश दिलाएँगे, और फिर साज़िश एक करेंगे।
करेंगे जैसी हम चाहेंगे हालत उसकी उसी तरह की।
बड़ी अजब है बात बिरह की॥

सुना है, सलाह की, आशिक़ को हम, ख़ुशबूदार मिट्टी मल देंगे।
पीट-पीट थापी से उसको दरिया में लहू के धो लेंगे।
पीट-पीट थापी से धोकर उसे ग़ोते बहुत-से हम देंगे।
ग़ोते देंगे, फिर हम उसको मारकर लात डुबो देंगे।
डूबा ना, आ बाहर गया तो चाल चलेंगे किस तरह की।
बड़ी अजब है बात बिरह की॥

रंगारंग नक़्क़ाशी वाला, महल हम एक बनाएँगे।
आशिक़ की हड्डियों से उसके थंभ खड़े हम कर लेंगे।
चारों तरफ़ उन्हीं का ज़ीना, उनसे ही पैड़ियाँ जोड़ेंगे।
महल के ऊपर से सिर नीचे हम धक्का दे पटक देंगे।
क़त्ल होगा आशिक़ परदेसी, और हम क़ातिल कहलाएँगे।
बात यह सारी अजब तरह की। बड़ी अजब है बात बिरह की॥

* हज़रत अली के बड़े लड़के। हज़रत अली, हज़रत मुहम्मद के दामाद और चौथे ख़लीफ़ा थे। हज़रत मुहम्मद के उत्तराधिकारियों को ख़लीफ़ा कहा जाता है। हसन ने अपनी थोड़ी-सी फ़ौज लेकर बड़ी वीरता से विरोधी क़बीले के साथ लड़ाई की थी।

आशिक़ आहो माशूक़ शिकारी, इहो शिकार करेसूं।
रम्ज़ां ग़म्ज़ां मज़ग़ां वाले, तिन्हीं कूं तीर मरेसूं।
नाम अल्लह दे नाल आशिक़ कूं, चा तक़बीर घतेसूं।
हत्थें अपने घन आशिक़ दे, चा वत खल खलेसूं।
बोटियाँ करके आतिश दे विच सीखें सिर चढ़ेसूं।
सीखें उतूं लाह कराहन, तल फल कर वंडेसूं।
तल फल दा गया ज़रा पुरज़ा, जान जिगर विच पेही, एही अजब जेही।

असल कनूं जो साड़ा आहा, सचल यार पुछेसूं।
विच दराज़ें जाइ तहीं दे, सारा विरह वंडेसूं।
उहो असांड़ा असां उहें दे इश्क़ कीतोसे नेही, एही अजब जेही।

आशिक़ वह, माशूक़ शिकारी, उसी का हम शिकार करेंगे।
राज़-भरे, नाज़-नख़रेवाले, हम पलकों के तीर चलाएँगे।
नाम अल्लाह का लेंगे हम और अल्लाहू अकबर बोलेंगे।
साथ ही साथ एक घन के नीचे आशिक़ को हम धर लेंगे।
घन से उसको पीटेंगे, फिर चाम उसका हम उधेड़ेंगे।
बोटी-बोटी करके उसकी चढ़ा सीख पर सिर को भूनेंगे।
कड़ाही में फिर तलेंगे सिर को, और टुकड़े करके बाँटेंगे।
टुकड़ा-टुकड़ा तल लेंगे जब, दिल ज़िन्दा फिर हो जाएँगे।
फ़ितरत है यह अजब तरह की। बड़ी अजब है बात बिरह की॥

सचल, शुरू से जो दिलबर है, जा उससे ही हम पूछेंगे।
दराज़* में उसके जाएँगे, और कुल हाल बिरही का कह देंगे।
वह है हमारा, हम हैं उसके, इश्क़ बनाया आशिक़ उसके।
बात है यह भी अजब तरह की, बड़ी अजब है बात बिरह की॥

* सचल का गाँव। वहीं उन्होंने रूहानी अभ्यास किया। अब वहाँ उनकी एक दरगाह और संग्रहालय है। यहाँ दराज़ से प्रभु का घर अभिप्रेत है।

चैनराइ सामी

जीवन परिचय

सूफ़ी दरवेश सामी साहिब ने अपना पावन आध्यात्मिक संदेश सरल सिंधी भाषा में दिया। आपका जन्म 1743 ई. में सिंध प्रांत के शिकारपुर शहर में लुण्ड घराने के एक ब्राह्मण परिवार में हुआ। आपके पिता का नाम श्री बच्चूमल दातारामानी था जो कपड़े के प्रसिद्ध व्यापारी थे। वे प्राय: प्रभु भक्ति में लीन रहते थे। चैनराइ भी अपने पिता की भक्ति से प्रभावित हुए और परमात्मा की भक्ति के रंग में रँगे गए। अपने पिता के परलोक सिधारने के बाद श्री चैनराइ सामी ने उनके व्यापार को सँभाला। कपड़े के व्यापार के साथ-साथ आप डेरा ग़ाज़ीखान में शाहों के पास उनके बहीखाते लिखने का काम भी किया करते थे।

सदाचारी इनसान होने के नाते व्यवसाय में झूठ-कपट को देखकर आपके मन में इस व्यापार के प्रति उदासीनता होने लगी। इसलिये आपने अपने व्यवसाय का दायरा छोटा कर लिया। लोगों को विश्वास था कि भाई चैनराइ कपड़े का व्यापार पूरी ईमानदारी से करते हैं और हक़-हलाल की कमाई पर विश्वास रखते हैं। व्यापार के सिलसिले में आप अकसर रावलपिण्डी जाया करते थे। वहाँ आपकी मित्रता एक नेकदिल मुसलमान पठान से हुई। इसी मुसलमान पठान से आपको फ़ारसी भाषा का ज्ञान प्राप्त हुआ।

आप बचपन से ही संत-महात्माओं की संगति के शौक़ीन थे। इसलिये पारिवारिक ज़िम्मेदारियाँ निभाते हुए आप साधु-संतों के सत्संग में भी नियमपूर्वक जाते थे। धर्म और संस्कृति में आपका गहरा रुझान था। धार्मिक ग्रंथों और शास्त्रों को पढ़ने में आपकी विशेष रुचि थी। इन धार्मिक ग्रंथों में

बताई गई विधि के अनुसार आपने अभ्यास भी किया। उस समय सिंध में सूफ़ियाना फ़िज़ा का दौर था, आप भी सिंध के अनेक सूफ़ी दरवेशों जैसे, शाह लतीफ़, सचल सरमस्त, रोहन फ़क़ीर, बादल फ़क़ीर आदि के कलाम बड़े शौक़ से पढ़ते थे। धीरे-धीरे उन पर सूफ़ी विचारधारा का इतना प्रभाव हुआ कि उनके अपने कलाम में भी यह प्रभाव स्पष्ट दिखाई देता है। इसी कारण सामी साहिब भी सिंधी सूफ़ी संतों की श्रेणी के ही माने जाते हैं। आपकी शायरी के अंदाज़ को देखकर विद्वानों और विचारकों ने आपको सिंध के 'मिल्टन' का ख़िताब दिया। सिंधी, फ़ारसी के अलावा आपको उर्दू और संस्कृत भाषा का भी गहरा ज्ञान था।

धर्मग्रंथों एवं शास्त्रों के गहरे ज्ञान और उनमें बताए अभ्यास के बावजूद आपके मन में पूरी तसल्ली न हुई। आप अभी भी सही मार्ग की खोज में व्याकुल थे। कहा जाता है कि एक रात जब चैनराइ सामी सो रहे थे तो सपने में आपको एक तेजस्वी महापुरुष के दर्शन हुए। उस महापुरुष ने आवाज़ देकर कहा कि भाई उठो! जागो! अपने आपको पहचानो। मुझसे प्रेम करते हो तो मेरी शरण में चले आओ।

जब आप नींद से उठे, तो वही नूरानी स्वरूप आपकी आँखों और दिल में समाया हुआ था। अगले दिन सुबह आप अपने परमार्थी मित्र श्री नारायण दास बैरागी के पास गए और उनको सपने का वृत्तांत सुनाया। श्री नारायण दास ने बताया कि हेमनदास के मंदिर में एक महात्मा स्वामी मेंघराज ठहरे हुए हैं और वहाँ उनके सत्संग का कार्यक्रम है।

अगले दिन जब आप अपने मित्र के साथ सत्संग में गए तो स्वामी मेंघराज जी के नूरानी जलाल को देखकर स्तब्ध रह गए। सपने में दिखाई देनेवाले उसी नूरानी स्वरूप को सामने पाकर आपका व्याकुल और तपता हुआ मन पलभर में शांत हो गया। श्री चैनराइ सामी ने उसी वक़्त श्रद्धा और प्रेम से अपना सिर स्वामी जी के आगे झुका दिया। उन्होंने आपको दीक्षित किया। सतगुरु की बताई युक्ति के अनुसार आप निरंतर अभ्यास करते रहे और लगातार 8-10 वर्षों तक सतगुरु की संगति में रहे। चैनराइ सामी अपने सतगुरु की संगति

में रहते हुए अंतर्मुखी अभ्यास के साथ-साथ काव्य रचना भी करने लगे। 40 वर्ष की अवस्था तक पहुँचते-पहुँचते आपने अपनी वाणी के कई श्लोकों की रचना की।

आपकी आत्मा पर रूहानी रंग चढ़ चुका था। ऐसा प्रतीत होता था कि आपके मुख से परमात्मा की वाणी की अमृतधारा बह रही हो। कहते हैं कि आप जब भी भजन-बंदगी और अभ्यास से उठते थे, तभी अपने अंदर के रूहानी अनुभव वाणी के रूप में काग़ज़ के छोटे-छोटे टुकड़ों पर लिखकर मिट्टी के घड़े में डाल दिया करते थे। ये श्लोक दोहा और सोरठा के मिश्रित रूप हैं। सिंधी श्लोकों को आप गुरुमुखी लिपि* में लिखा करते थे†। आपने अधिकांश समय अमृतसर में बिताया, इसलिये आपकी वाणी में गुरु साहिबान की वाणी का भी प्रभाव है।

कहा जाता है कि जब आपके गुरुदेव स्वामी मेंघराज जी ने सिंध में अपने नश्वर शरीर का त्याग किया, तो उसकी सूचना आपको अमृतसर में मिली। आप अमृतसर से शिकारपुर (सिंध) वापस लौट आए और वहीं रहने लगे। आपके निवास स्थान को 'सामी का कुआँ' कहकर पुकारा जाता है जो आज भी शिकारपुर में एक पवित्र स्थान माना जाता है। यहीं आपने 1850ई. में अपनी देह को त्याग दिया। उस समय आपकी उम्र 107 वर्ष की थी।

ऐसा भी कहा जाता है कि आपके पुत्र घनश्याम दास ने आपसे कई बार निवेदन किया था कि वाणी के काग़ज़ों को मिट्टी के घड़े से निकालने की इजाज़त दी जाए, ताकि इनको पोथी के रूप में छपवाया जा सके, परंतु आपने कहा कि अकालपुरुष की इस वक़्त यह मौज नहीं है और न ही इनको छपवाने का हुक्म है। कोई साधु अपने आप इन काग़ज़ के टुकड़ों पर लिखे गए श्लोकों को छपवाएगा। यह सेवा कार्य उसी साधु के निमित्त है।

कुछ समय बाद घनश्याम दास के घर एक साधु आया। उसने साधु को काग़ज़ के टुकड़े सौंपकर, उन्हें छपवाने का निवेदन किया और उस साधु को

* उस समय सिंध में गुरुमुखी को भी एक लिपि के रूप में अपना लिया गया था।

† वाणी में आपने अपना उपनाम 'सामी' प्रयोग किया है। (आडुवाणी, प्रो. कल्याण बूलचन्द, सामी (सिंधी)

एक हस्तलिखित पत्र भी दिया, जो घनश्याम दास ने अपने मित्र को काग़ज़ की व्यवस्था के लिये लिखा था। साधु वह पत्र तथा कागज़ के टुकड़े लेकर चला गया। एक लंबे समय तक उस साधु की ओर से श्लोकों के प्रकाशन के संबंध में कोई सूचना नहीं मिली। इसलिये घनश्याम दास जी अपने पुत्र नारायण को साथ लेकर साधु की तलाश में निकल पड़े, लेकिन काफ़ी पूछताछ करने पर भी उस साधु के बारे में कोई जानकारी नहीं मिली। आख़िर वे निराश होकर घर लौट आए।

एक दिन उन्हें सूचना मिली कि लाड़काने के निवासी श्री गंगाराम रोहिड़ी ने हरि मंदिर से 1400 श्लोकों की एक पुस्तक प्रकाशित करवाई है। जब यह श्लोकों की छपी पुस्तक श्री घनश्याम दास को मिली, तो आपका मन प्रसन्नता से खिल उठा कि किसी गुरुमुख ने आपके पिता श्री चैनराइ सामी की विरासत को आम जनता के सामने पेश तो किया। इसके बाद दीवान कौड़ोमल खिलनानी, प्रो. कल्याण बी. आडुवाणी, प्रो. बी. एच. नागरानी, मूलचन्द ज्ञानी, प्रो. लक्ष्मण हर्दवाणी, डॉ. अब्दुल करीम संदेलो आदि ने भी इनकी वाणी को प्रकाशित कराया। इनकी वाणी के सबसे अधिक श्लोकों की संख्या 4336, श्री परसराम पारूमल द्वारा प्रकाशित पुस्तक में है।

परमात्मा

1. अबिनासीअ जो नासु, कडी कदाचिति न थिए।
आहे जंहिंजे आसिरे, धरती धवलु आकासु॥
सूरिजु, चन्दिरु पाणी पवनु, तेज पुन्ज परिकासु।
बेहदि रचे बिलासु, सइल करे सामी चए॥

2. हाज़िरां हज़ूरु, सामी ज़ाणु सरूप खे।
अन्दरि बाहिरि दह दिसां, सदाई भरिपूरु।
जीएं नइननि में नूरु, तीएं सनमुखु डिसे सुपिरीं॥

3. परमेसरु पूरनु, चीटीअ अऊं कुंचर में।
जाइ डिठीसीं कानका, आतम रे ऊरनु।
थिअड़ो चितु चूरनु, सामी डिसी सरूप खे॥

4. सामी सभु दीदारु, अथी अजीबन जो।
डिसे बुधे पाण थो, बोले बोलणहारु।
निराकारु आकारु, धारे आयो जग में॥

परमात्मा अनादि और अविनाशी है। संपूर्ण सृष्टि और खंड-ब्रह्मांड उसी के सहारे क़ायम हैं। सामी साहिब ने परमात्मा की सर्वव्यापकता की उपमा आकाश से की है। जैसे आकाश हर जगह दिखाई देता है, वैसे ही परमात्मा सब जगह व्याप्त है। प्रभु की लीला अपरंपार है। उसके भक्त को हर वेश में, हर भेष में, हर रंग-रूप में प्रभु ही नज़र आता है। वह अपनी रची लीला को परदे के पीछे से देखकर प्रसन्न हो रहा है।

1. वो तो है अविनाशी, उसका कभी न होता नाश।
उसके दम पर ही क़ायम हैं, धरती धवल आकाश॥
सूरज चन्दा नीर पवन, तेज पुंज प्रकाश।
बेअन्त रचना रचकर सामी, करे उसमें रमण विलास॥

2. सामी अपने प्रीतम को तू, जान हाज़िरां हज़ूर।
अन्दर बाहर दसों दिशा में, सदा बसे भरपूर।
सारे जग पर नज़र उसी की, ज्यों नैनन में नूर॥

3. चींटी और हाथी में, है परमेश्वर पूरन।
देखी नहीं जगह कोई, हो जो आत्मा बिन।
देख दरस साहिब का सामी, रोम रोम हुआ मगन॥

4. सामी एक प्रभु का, सब जगह दीदार।
खुद ही देखे, सुने भी ख़ुद ही, ख़ुद ही बोलनहार।
निराकार है लेकिन, धारण कर आया आकार॥

5. सज॒ण जी सोभिया, कहिड़ी चवां मुख सां।
सामी सहसे सिज चंड, लजामान थिया॥
पुछी डि॒सो तनीं खों, जनि दीदार किया।
लंघे पारि पिया, संसे जे सागर खों॥

6. शहरग॒ खों नज़दीकु, सज॒णु अथी ओडि॒ड़ो।
कढी ग़ैर अन्दर मूं, करे डि॒सु तहक़ीकु।
नाहक़ु कुरकु म कीक, सामी चए समुझ रे॥

7. साबितु रखु सिदिक़ु, उलटी ऐन अल्लाह ते।
जो सामी सभ कंहिं खे, रज़िक़ डि॒ए राज़िक़ु॥
अथी अलेपु आकास जां, अन्दरि बा॒हरि हिकु।
लिंव सां कढी लिकु, सनमुखु डि॒सन सूरज जां॥

8. निरिगुणु ऐं सरिगुणु, बे॒ई आकार अलख जा।
जंहिंखे प्रेम परितीति सां, मने तुंहिंजो मनु॥
तंहिंजो करि तदरूपु थी, बिना भेद भज॒नु।
प्रीति उते परिसनु, सामी थींदुइ सुपिरीं॥

9. जंहिं ठग॒ ठगी॒, कई कुल जहान सां।
सामीअ जी तंहिं ठग॒ सां, पूरन प्रीत लगी॒॥
गुरगम ज्ञान अगम जी, जग॒ मग॒ जोति जगी॒।
सहजे भ्रांति भगी॒, जागि॒ए ईसर जीअ जी॥

5. साजन की शोभा का मैं, कैसे करूँ बखान।
हज़ारों सूरज चन्दा सामी, उस आगे लज्जावान॥
पूछो ज़रा उनसे जाकर, जिनको वह दृश्यमान।
भरम भुलावे के सागर से, हो गये पार सुजान॥

6. तेरा साजन तेरे अंदर, शाहरग से नज़दीक*।
द्वैत निकाल अन्दर से, कर ले तू तहक़ीक़।
सामी बिन समझे बूझे, मत नाहक़ चिल्ला-चीख़॥

7. दृढ़ विश्वास रख प्रभु पर, दुनिया से उलट ले तू ध्यान।
वही जग का पालक सामी, रोज़ी रोटी करता प्रदान॥
आकाश समान अलेप जो, अन्दर बाहर एक तू जान।
लगन से प्रकट कर गुप्त को, फिर प्रत्यक्ष दिखेगा सूर्य समान॥

8. दोनों ही रूप अलख के, निरगुण और सगुण।
जिसे प्रेम और प्रतीत से, माने तेरा मन॥
उसी का रूप हो जा तू, तन्मय हो, कर भजन।
प्रीत देख तेरी सामी, होगा प्रीतम तेरा प्रसन्न॥

9. की जिस ठग ने, कुल जहाँ से ठगी।
सामी की उसी ठग से, पूरन प्रीत लगी॥
सतगुरु ज्ञान अगम की, जगमग जोत जली।
प्रभु के जगाए जीव की, सहज ही भ्रान्ति भगी॥

---

* हम शाहरग से भी अधिक उसके निकट हैं (क़ुरान 50:16)

10. अण हून्दी बाज़ी, बाज़ीगर बरहालु की।
काथे पीरु फ़क़ीरि अमीरु थियो, काथे शेख़ु मुल्लां क़ाज़ी॥
काथे गुरु गुसाईं ग्यानुवानु, काथे हज करे हाजी।
काथे राजा प्रजा चौधरी, काथे महितो मियांजी॥
काथे सूरबीरु दातारु थियो, काथे मिनथ मोथाजी।
काथे चोरु चुगुलु ठगु मसिख़रो, काथे पिण्ड खणे पाजी॥
काथे गणतीअ लेखे दुख में, काथे रज़ा में राज़ी।
सामी जंहिं साजी, सो साखी पट पार थी॥

11. क़ुदरत तुंहिंजी क़ादुरा, डिसी मनु ठरे।
काथे सुल्ताननि सुल्तानु थीं, काथे दरि दरि भीख करीं॥
काथे लख लुटाईं डींहं में, काथे कोडीअ काणि मरीं।
काथे सूरत जो सरदारु थीं, काथे मोहें ज़ोक़ ज़रे॥
काथे ज़ोरावर ज़ालिम थीं, काथे डिसी रूप डरीं।
काथे अलबेलो अवधूत थीं, काथे गणितीअ मंझि गरीं॥
काथे ज्ञानु करें गुलिज़ारु थी, काथे सुडिकी साह भरीं।
मन वाणीअ खूं परे, आहे सिफ़त तुंहिंजी साहिबा॥

12. जानी आयो आहि, भेखु धरे बाज़ार में।
पाण लिकाए पाण खां, थो खेले नाना भाइ॥
गुरु शेवकु पाण थी, लख अलख लखाइ।
सामी सहज सुभाइ, रान्दि रचाई खुश थी॥

10. उस अपरम्पार बाज़ीगर ने, अद्‌भुत लीला ऐसी रची।
कहीं पीर फ़क़ीर अमीर बना, कहीं शेख़ मुल्ला काज़ी॥
कहीं गुरु गोसाईं ज्ञानवान, कहीं हज करे हाजी।
कहीं राजा प्रजा चौधरी, कहीं महंत मियाँ जी॥
कहीं शूरवीर दाता हुआ, कहीं विनम्र मोहताजी।
कहीं चोर चुगल ठग मसख़रा, कहीं बोझ उठाए पाजी* ॥
कहीं लगाता हिसाब दुखों का, कहीं रहे रज़ा में राज़ी।
वह बैठा परदे के पीछे, सामी जिसने बाज़ी साजी॥

11. साहिब तेरी साहिबी, देख देख जी ठरे।
कहीं शाहों का शाह है, कहीं भीख माँगता फिरे॥
कहीं लाख लुटाए दिन में, कहीं कौड़ी ख़ातिर मरे।
कहीं गौरवशाली सरदार, कहीं शौक में मचले॥
कहीं ज़ोरावर ज़ालिम, कहीं सूरत देख डरे।
कहीं मस्त जोगी बने, कहीं चिन्ता में गले॥
कहीं देता ज्ञान मौज में, कहीं रोवे सिसकियाँ भरे।
मेरे साहिबा तेरी महिमा, मन वाणी से है परे॥

12. स्वाँग धर संसार में, वो दिलबर है आया।
भाँति भाँति के खेल कर, ख़ुद को ख़ुद से छिपाया॥
गुरु सेवक ख़ुद बन, अलख देश लखाया।
मौज में आकर सामी, उसने खेल रचाया॥

* नौकर

13. आयो नागरु नटु, भेखु धरे बाज़ार में।
बांभणु चए बियाईअ रे, कढी वेठो हटु॥
पाण वपारी वणिजु थियो, पाण ताराज़ी वटु।
रइयत राजा पाण थियो, कांइरु सूरु सुभटु॥
पाण कुम्भरु आवी बणियो, चकु मिटी घटु मटु।
पाण फूलु फल पतरु थियो, पाण डारु बिजु बटु॥
अन्दरि बाहिरि दहि दिसा, खेले गुपतु प्रघटु॥
परची खोले पटु, पाण लखाए पाण खे॥

14. नाना रूप धरे, ख्याली खेले पाण सां।
जोड़े बुत मिट्टीअ जा, जिएं बालकु रान्दि करे।
रहे पाण परे, नटु नचाए पुतिलियूं॥

13. भेष धर संसार में, आया नागर नट।
बांभण* कहे द्वैत बिना, खोले बैठा हाट॥
ख़ुद बनिया, ख़ुद व्यापार, ख़ुद तराजू बाट।
राजा, प्रजा ख़ुद हुआ, कायर शूर सुभट†॥
ख़ुद कुम्हार आवा बना, चाक मिट्टी घड़ा माट।
ख़ुद फूल, फल, पत्ता हुआ, ख़ुद डाल, बीज और वट‡॥
अन्दर बाहर दसों दिशा, खेले गुप्त प्रकट।
ख़ुद ही ख़ुद को लखाय, रीझकर खोले पट॥

14. खुद से खेले खेल, नाना रूप धरे।
बुत बनाये माटी के, बालक ज्यों खेल करे।
नट नचावे पुतलियाँ, रहता ख़ुद परे॥

* सामी का एक और उपनाम † शूरवीर ‡ पेड़

सतगुरु

1. केड़ी वड़ाई, गणियां पुरख दयाल जी।
जंहिं रखी हथु मथे ते, ममिता मिटाई॥
मूरत महबूबनि जी, अन्भइ में आई।
सामी सभाई, विसि वसे जहिं आसरे॥

2. राजनि जो राजा, सामी मिलियो सतिगुरु।
जंहिं कटे विधा कोट जा, दरियूं दरिवाजा॥
करे छड़ियाईं कलपत खों, अनल जां आजा।
वजाए वाजा, सुम्हियो सूखम सेज ते॥

3. निमाणनि जो माणु, सहजे मिलियो सतिगुरु।
लख लखाए अन्भई, कयो तंहिं कल्याणु॥
सुतह डिठो सामी चए, पाण वराए पाणु।
जंहिंजो वेद वख्याणु, सदा करनि संसार में॥

राजन के राजा सतगुरु की महिमा शब्दों में बखान नहीं की जा सकती। सतगुरु जिसको अपनी शरण में लेना चाहें, उसके साथ कोई ऐसी विचित्र घटना घट जाती है, जिससे उसके मन में सतगुरु से मिलाप की कसक पैदा हो जाती है। सतगुरु की शरण में जाकर जीव प्रभु-प्रेम के रंग में रँग जाता है और उनकी रहमत से भवसागर से पार हो जाता है। इस प्रकार सतगुरु के बताए मार्ग पर चलकर जीव निर्भय पद पा लेता है और मनुष्य-जन्म का परम उद्देश्य पूरा करने में सफल हो जाता है।

1. कैसे महिमा बखान करूँ, सतगुरु पुरुष दयाल की।
रख कर हाथ मेहर का सिर पे, ममता मेरी मिटा दी॥
सारे ब्रह्माण्ड को आधार, सामी एक उसी का।
उसी प्रीतम की मूरत, अन्तर में रहती छाई॥

2. राजन के राजा सतगुरु, मिल गये सामी मुझे।
तोड़ दिये जिसने गढ़ के, खिड़की-दरवाज़े॥
जैसे रहता आज़ाद अनल, माया के बंधन तोड़ के।
शब्द-धुन में लीन हुआ, सोवे सूक्ष्म सेज पे॥

3. मिल गया सतगुरु सहज ही, निमाणों का मान।
अलख लखाया अन्तर में, किया उसने कल्याण॥
अंतर्मुख अभ्यास में सामी, प्रत्यक्ष हुआ वह आन।
वेद सदा संसार में, जिसका करें बखान॥

4. महान दुर्लभु दर्सनु, साधू जन सापुरिस* जो।
सामी मिले तंहिंखे, जहिंते पिरीं थिए परसनु।
तनु मनु सभु कंचनु, करे कलिप कढी करे॥

5. अहिड़ा पुरिख दयाल, सामी अथी संत जन।
जे मिलाए महबूब सां, कटिनि दुःख जंजाल॥
अविद्या जी अन्दर में, रखनि कान रवाल।
थिअड़ा लाल गुलाल, तनि सां मिली केतिरा॥

6. बोहिथ साधुअ संगु, पूरो सतिगुरु पातणी।
सामी मिले तंहिंखे, जंहिंते आगो रखे अंगु॥
सो भव सागर जे भीड़ खों, पिअड़ो पारि निसंगु।
अन्भइ आत्म रंगु, लगो कोड़िनि मंझों कनि खे॥

7. सुखनि जो सागरु, सामी मिलियो सतिगुरु।
डिनो तंहिं अन्भई, प्रश्न जो उतरु॥
तूंही देही जीउ तूं, तूं ई परमेसरु।
हणी कोहु टकरु, भुली भेद भरम में॥

8. डिसी ऐन आजजु, अचे मिलिया सुप्रीं।
कयाऊं दिव्य दृष्टि सां, सुको बागु सब्जु॥
अविद्या ऊंधइ न रही, सिर ते आयो सिजु।
सदाई लागर्जु, सामी रहे स्वभाव में॥

* महात्मा

4. संत महात्मा साधु का, है अति दुर्लभ दरसन।
सामी मिलें उसीको, जिस पे सांई प्रसन्न।
भेद भरम निकाल दें, निर्मल होय तन मन॥

5. सामी हैं सन्त जन, ऐसे पुरुष दयाल।
जो मिलाएँ प्रीतम से, काटें भरम जंजाल॥
अज्ञान का कण-कण, अन्तर से दें निकाल।
उनसे मिल कितने ही, हुए लाल गुलाल॥

6. साधु शरण जहाज़ है, सतगुरु खेवनहार उसका।
सामी मिलते उसी को, धुर से लेख हो जिसका॥
भवसागर की विपदा से, पार हो निर्भय हुआ।
कोटिन में किसी एक को, आत्म ज्ञान का रंग चढ़ा॥

7. सामी मिल गया सतगुरु, सुखों का सागर।
दिया अंतर में उसने, मेरे प्रश्न का उत्तर॥
तू ही देही, आत्मा भी तू, तू ही ख़ुद परमेश्वर।
मैं भूला भेद भरम में, क्यों मार रहा था टक्कर॥

8. जब देखा दीन निमाना, तभी आ मिला प्रीतम प्यारा।
दिव्य दृष्टि से अपनी, सूखा बाग़ हरा किया॥
उदय हुआ ज्ञान का सूरज, अज्ञान अँधेरा मिट गया।
अपने आप में ही सामी, बेपरवाह रहता सदा॥

9. पिरियन हथु रखी, निमाणी निहालु की।
परची कयाऊँ पंहिंजी, सुहागिणि सखी।
आतम रसु चखी, सामी लूंअ लूंअ लालु थी॥

10. सामी कीन छडे, सतिगुरु पूरो सिख खे।
जीएं तीएं पाण सां, जोड़े जीउ गडे।
रातियूं डींह सडे, रखी नेण नेणनि में॥

11. अहिड़ी केरु करे, सामी बिना सतिगुरुअ।
मूरख मति हीणीअ ते, अन्भइ छतिरु धरे॥
करे पटु परे, सारु लखाए सभ में॥

12. कोहु करियां सदक़े, सतिगुर मर्द मलाह तों।
जंहिं पारि लंघायो पल में, परची पूरि पके॥
सामी सभ छडियाईं, ऐब सवाब ढके।
मोटी कीन तके, वाट जगाती धरमराइ॥

13. शेवकु आज़ारी, आयो गुर तबीब डे।
तंहिं नाड़ि निहारे मन जी, दया दृष्टि धारी॥
तपति टिनि तापनि जी, खिण में निवारी।
लूंव लूंव सभ ठारी, सीतलु थियो सामी चए॥

14. समुझ अऊं सिदिक़ु, जनि खे डिनो सतिगुरुअ।
से ख़ासा ख़िलिवतदार थिया, हरिदमु डिसनि हिकु।
तोड़े रखनि लिकु, त भी सामी लिकनि कीनकी॥

9. शरण देकर प्रीतम ने, निमानी को निहाल किया।
रीझकर प्रभु ने सखी! मुझे सुहागिन बना दिया।
चखाया नामरस सामी, रोम-रोम को रंग दिया॥

10. पूरा सतगुरु सामी, सेवक को कभी न छोड़े।
जैसे-तैसे जीव को, अपने से बाँधे और जोड़े।
डाले नज़र मेहर की, दिन रात बुलावा देवे॥

11. सामी बिना सतगुरु के, ऐसी कृपा कौन करे।
मूर्ख-मति निर्बल को, ले शरण में निर्भय करे।
प्रभुरूप दिखाए सबमें, पर्दे को दूर करे॥

12. क्यों न जाऊँ बलिहारी, सतगुरु समर्थ मल्लाह पर।
पार लगाया जिसने पल में, पहुँचाया प्रीतम के घर॥
सामी सब किया अनदेखा, गुण अवगुण ढक कर।
लेखे को अब धर्मराज, ताके न मुझको मुड़कर॥

13. रोगों से पीड़ित सेवक, आया शरण गुरु हकीम की।
नब्ज़ मन की देखी जब, दया-दृष्टि धार ली॥
तपन तीनों तापों की, पल में ही मिटा दी।
सामी कहे शीतल हुआ, रोम रोम में ठंड भरी॥

14. दिया सतगुरु ने जिनको, ज्ञान और विश्वास।
हरदम देखें उसी को, मित्र बना जो ख़ासम-ख़ास।
रखें छिपाकर, फिर भी, सामी छिपे न उनका प्यार॥

15. सतिगुरु सुजाती, मिलियो आदि जुगादि जो।
पाए वेठो पिरेम सां, झातीअ में झाती।
सामीअ सुजाती, मूरत महबूबनि जी॥

16. करियां सभु सदके, तनु मनु पुरख दयाल तों।
जुगिति सां जोड़े करे, जहिं विधो जीउ छिके॥
सामी गुर दरिसन रे, हिकु पलु कीन टिके।
लूंव लूंव सिक सिके, आतम रसु पाए करे॥

17. कुसंगु छडाए, सोई साधू सतिगुरु।
डेई गुण हरी भगत जा, अवगुण मिटाए॥
अन्तर्मुखु जोड़े करे, अविद्या पटु लाहे।
सामी लखाए, आतमु पदु अखिनि सां॥

15. परम पुरुष आदि जुगादि का, पाया सतगुरु रूप में।
अन्तर्मुख ही रहूँ झाँकता, मगन रहूँ अब प्रेम में।
अपने प्रीतम की मूरत को, पहचान लिया सामी ने॥

16. उस दयाल पुरुष पर, तन मन सब क़ुर्बान किया।
युक्ति देकर जोड़ा संग में, बींधकर दिल खींच लिया॥
सामी गुरु दर्शन बिना, मन पल भर भी ना टिके।
अमृत रस पाकर अब, रोम-रोम उसी को तरसे॥

17. सोई संत सतगुरु, जो कुसंग छुड़ाए।
बख़्शे गुण हरि भक्ति के, अवगुण सब मिटाए॥
कर अन्तर्मुख जोड़े उससे, अज्ञान पट हटाए।
सामी अन्तर आँख से, आतम पद लखाए॥

मनुष्य जन्म

1. मूरखु विखु खाए, थो आतम अमृत खे छड्डे।
हीरा लाल अण मुल्हा, थो रोले विञाए॥
सामी ड्डिसे कीनकी, मुंहु मढ़ीअ पाए।
हठु कयो हारे, थो मानुख देहि अमोल खे॥

2. मूरख जीअ ख़राबु, कया कलिपति पांहिंजीअ।
जनिमी मरी जम खे, हर हर ड्डियनि हिसाबु।
कोड़िनि में को हिकड़ो, करे खुशीअ सां ख्वाबु।
जंहिंखे शौकु शराबु, सामी ड्डिनो सतिगुरुअ॥

3. मूरख कनि ख़ुवारि, चौरासी में पाण खे।
अगिएं रुलें केतिरो, हाणे थी होशियारु॥
मिली महदि जननि सां, पहिंजो करु उधारु।
हइड़ो समो सारु, सामी लहंदें कीन की॥

4. कंहिं विरले खे आहे, कदुरु मानुख देहि जो।
ड्डिठो जंहिं गुर गियाति सां, मुंहुं मढ़ीअ पाए।
ममता मिटाए, सुखी थियो सामी चए॥

मनुष्य-जन्म को सर्वश्रेष्ठ माना गया है, परंतु मनुष्य अज्ञानता के कारण इस देहरूपी हीरे की क़द्र नहीं करता। वह माया के भोगों में लिप्त होकर प्रभु-मिलन के इस सुनहरी अवसर को गँवा बैठता है। सामी साहिब हमें चेतावनी देते हुए समझाते हैं कि माया का प्रपंच छोड़कर संत-सतगुरु की संगति करो और अपना जीवन सँवार लो, वरना काल के हाथों बार-बार ख़्वार होना पड़ेगा।

1. आत्म अमृत छोड़कर, मूर्ख विष को खाए।
हीरे-सा अमोल धन, बेक़दर हो गँवाए॥
सामी अन्तर्मुख होकर, वह झाँक न पाए।
उत्तम मानुष जन्म को, हठ में दे गँवाए॥

2. मूर्ख जन्म गँवाएं, अपने ही भ्रम जाल में।
हिसाब देवें यम को, जन्म मरण के फेर में॥
कोटिन में कोई एक, समझे जग को ख़्वाब।
सामी जिसको सतगुरु, बख्शें अमृत ख़ुमार॥

3. चौरासी में ख़ुद को, मूरख करते ख़्वार।
पहले भटके हो बहुत, अब तो होश सँभाल॥
संतजनों से मिल, कर अपना उद्धार।
सामी मनुष्य जन्म का अवसर, मिले ना बारम्बार॥

4. मानुष देह की कीमत जाने, विरला कोई इनसान।
अन्तर्मुख हो झाँका जिसने, लेकर गुरु से ज्ञान।
सामी कहे ममता मिटाए, सुखी हुआ इनसान॥

5. नाहकु विञाएं थो मूरख मानुख देहि खे।
सामी संतनि सां मिली, लेखे न लाएं॥
ज़ाणी सति संसार खे, रोएं ऐं खाएं।
बुक भरे लाएं, थो मिटी पांहिंजे मुंहं खे॥

6. मूरख मवासी, खोहि न मानुख देहि खे।
मिली वठु महबूब सां, छड्डे हठु हासी॥
मतां अची ओचिती, कालु विझेई फासी।
भवंदें चौरासी, सामी चवेई सांति रे॥

7. हीरो जनमु न हारि, मूरख जीअ मरम रे।
थो चारि विञाईं निन्ड में, कूड़ कपट में चारि॥
डिसी काल क़हार खे, रुअंदें ज़ारों ज़ारि।
साझुरि सारि संभारि, सामी चए साध संगि॥

8. कूड़ा कम करे, खोहि न मानुष देहि खे।
मिली वठु महबूब सां, सची सिक धरे॥
कालु तुहिंजे कंध ते, बीठो बाण भरे।
पवदें पोइ परे, सिज लथे सामी चए॥

9. वञेथी वहंदी, आरजा हिननि हथनि मों।
जीएं जल अथाह जी, सामी बेगु नदी॥
तूं सार सम्भारि तंहिंखे, आहीं जंहिं संदी।
मताँ पोइ अंधी, जमु करेई जुठियूं॥

5. मूर्ख मानुष देह को यों ही व्यर्थ गँवाए।
संतों की संगति में सामी, सफल क्यों न बनाए॥
सत्य माने संसार को, भोगे और रोए।
मुट्ठी भर मिट्टी, मुँह पे अपने लगाए॥

6. मूरख! लापरवाही में तू, मानुष देह क्यों खोए?
मिल ले प्रीतम से तू, हठ-हँसी छोड़ दोय॥
कहीं अचानक काल का फंदा, तेरा गला दबोए।
चौरासी के चक्कर में तू, सामी भटके रोए॥

7. मूर्ख जीव समझ रे, हीरा जन्म न हार।
चार गँवाता सोय के, झूठ कपट में चार॥
देख निर्दयी काल को, रोएगा ज़ारो ज़ार।
सामी कहे कर साध संग, जल्दी सुरत सँभार॥

8. व्यर्थ काम करके, मत खो मानुष देह को।
दिल में रख कसक, मिल अपने प्रीतम को॥
तेरे सिर पर काल, खड़ा है ताने बान।
मौत आयेगी सामी कहे, चौरासी पड़ेगा आन॥

9. जैसे गहरा पानी सामी, बहता तेज़ गति से।
उम्र निकलती जा रही, तेरे इन हाथों से॥
है तू अंश जिसका, उसे पुकार दिल से।
ऐसा ना हो अज्ञानी, बेहाल हो तू काल से॥

नाम-शब्द

1. सामी जंहिं वदो, गुरगम नांउ अलख जो।
तंहिंजो वारियो धर्मराइ, खुशीअ साणु खन्धो।
पांहिंजो पाणु लधो, विछिड़ियो कोटु जनम जो॥

2. लधो गुर प्रसादि, अनभइ लालु अन्दर मों।
जंहिंजो तोलु न मोलु को, नको अन्तु न आदि॥
न को रूपु न रंगु को, न को वादि विवादि।
करे सदाईं यादि, सामी सुख स्वरूप खे॥

3. सदाई कुर्बानु, वञां तुंहिंजे नांव तों।
जंहिं प्यारे प्रेम रसु, डिनो आतम ज्ञानु॥
रहियो न रतीअ जेतिरो, अन्दर में अभिमानु।
सामी सभु जहानु, जागी डिठो जोति में॥

4. औखदु आहे नामु, सामी चए सभ रोग जो।
कोड़िनि में को हिकिड़ो, समुझे नरु निहकामु।
कयो जंहिं आरामु, हद छडे बेहद में॥

सामी साहिब ने प्रभु के नाम को शब्द, अनहद शब्द कहकर पुकारा है। वे कहते हैं कि यह अनहद नाद, दिव्यवाणी इस देही के अंदर निरंतर गूँज रही है। सतगुरु की बताई युक्ति से अंतर्मुख होकर इस शब्द-धुन को सुना जा सकता है। जो भाग्यवान् जीव इस शब्द-धुन का अनुभव कर लेता है, वह माया का मोहताज नहीं रहता। शब्द-धुन में लीन हो जाने पर संसार के सब पदार्थ फीके लगते हैं, सब संताप दूर हो जाते हैं और जीव का रोम-रोम आनंदित हो जाता है। उसे सतलोक का राज मिल जाता है। सामी साहिब हिदायत करते हैं कि जीव को सब कर्मकांड त्यागकर केवल शब्द या नाम के अभ्यास की ओर ध्यान देना चाहिये।

1. गुरु कृपा से जिसने सामी, नाम अलख का पाया।
धर्मराय ने ख़ुशी ख़ुशी से, लेखा सारा वापस किया।
कोटि जनम का बिछुड़ा था, अपने को पहचान लिया॥

2. गुरु कृपा से पाया अन्तर में, नाम का लाल अमोल।
जिसका आदि-अन्त न कोई, ना कोई तोल न मोल॥
न कोई रूप, रंग न कोई, न कोई वाद-विवाद।
सामी सुख स्वरूप को, करता सदा ही याद॥

3. तेरे अमोल नाम पर मैं, सदा-सदा क़ुर्बान।
जिसने पिलाया प्रेम रस, और बख़्शा आतम ज्ञान॥
रहा न अब रत्ती भर भी, अन्तर में अभिमान।
जाग्रत होकर जोत में देखा, सामी सकल जहान॥

4. औषधि है सब रोग की, गुरु का बख़्शा नाम।
कोटिन में कोई एक सामी, समझे नर निष्काम।
हद छोड़ बेहद में, सदा करे विश्राम॥

5. जनिहीं जपियो जापु, अखण्डु अजीबन जो।
मिटियो तंहिंजे मन मों, सभोई संतापु॥
घिड़ी लधाऊँ घर मों, सामी सरबव्यापु।
मोटी पुनु अऊं पापु, तनि खे फुरे कीन की॥

6. सभु जगु कूड़ु डिठो, बिना नाले नाम जे।
सामीअ खे सतिगुरु रे, लगे कीन मिठो।
कर्मनि जो चिठो, तनि फाड़े सभु फिटो कयो॥

7. जपियो जंहिं हरिनामु, गुरगमु माल्हा मुख रे।
पातो तंहिं परतीति सां, अनभइ देसु इनामु॥
चढ़ी वेठो तखत ते, करे अभेदु आरामु।
सभुको करे सलामु, सामी चए शेवकु थी॥

8. जंहिंखे अजपा जापु, सहजे डसियो सतिगुरुअ।
मिटियो तंहिंजे मन मों, सपाड़ो सन्तापु॥
अन्दरि बाहरि आत्मा, डिसे ऐनु अमापु।
ममत्व रे मेलापु, सामी करे सभ सां॥

9. मझीं तन तंवार, वजे वेल सभ कंहीं।
चंग तम्बूरा केतरा, सामी साज़ अपार॥
अठई पहर अन्दर में, संदी पिरींअ पचार।
कंहिं कंहिं मङणहार, सोझी हिन सरोज जी॥

5. अनुपम प्रभु के नाम का, जिसने सुमिरन कर लिया।
सभी दुःख और संताप, मन से उसके मिट गया॥
प्रवेश करके घट में, सर्वव्यापी को खोज लिया।
पाप पुण्य फिर लूट न पाते, सामी उनसे पार हुआ॥

6. बिना प्रभु नाम के, सब जग झूठा दीठा।
सतगुरु बिना अब तो सामी, लगे न कुछ भी मीठा।
फाड़ फेंक दिया उसने, सब कर्मों का चिट्ठा॥

7. बिन माला बिन बोले, जिन जपा हरि नाम।
पाया उसने परतीत से, निज परम पद इनाम॥
परम पद के आसन पर, करे अभेद विश्राम।
सामी कहे उस सेवक को, करें सभी प्रणाम॥

8. सतगुरु सहजै बताया, जिसको अजपा जाप।
मन से उसके उखड़ गया, जड़ सहित संताप॥
अंदर-बाहर आत्मा, देखे प्रीतम अपार।
सामी कहे बिन मोह के, सबसे रखे मिलाप॥

9. सदा ही गूँजती रहती, हर देही में शब्द झंकार।
चंग तंबूरा और कितने ही, सामी बजते साज़ अपार॥
आठों पहर अन्तर में, साहिब रहता याद।
सूझ जिसे इस शब्द की, कोई विरला माँगनहार॥

10. निरभइ नगारो, अखंडु वजे थो आदि जो।
बुंधे को बांभणु* चए, भागिवानु भारो॥
मिटियो जंहिंजे मन मों, अविद्या अंधारो।
जाणे जगु सारो, चिमतिकारु चेतन जो॥

11. अनहद जो आवाजु, बुधो जंहिं गुरगियात सां।
पर्ची कयो तंहि पंहिंजो, बिना कल्पित काजु॥
सामी सदाई करे, राम नगर जो राजु।
माया जो मोहताजु, कडीं थिए कीनकी॥

12. अनहद जो झणकारु, बुधो जंहिं बांभणु चए।
मिटियो तंहिं जे मन मों, विधि निखेद वहिंवारु॥
चीटीअ अऊं कुंचर में, डिसे साखी सारु।
अहिड़ो पद अपारु, पाए परचो पाण में॥

13. लोड़े कढियाऊं लांग, मोती जनि मस्तक में।
जंहिं डिठे डोह विया, सा बुधाऊं बांग।
सामी छडे सांग, वञी नज़रि चढ़ियो नाथ जे॥

14. वाणीअ भुलायो, वञी पियो आड़ाह में।
वाणीअ डेई हथड़ा, सागरु लंघायो॥
इहो वलु अलिवलो, को समुझे समुझायो।
समुझी समायो, तडी सुखी थियो सामी चए॥

* सामी साहिब का उपनाम बांभण भी था

10. अखंड बज रहा आदि से, वह निर्भय नगाड़ा।
बांभण कहे कोई सुने, जो भाग्यवान हो भारा*॥
मिट जाता मन से जिसके, अविद्या का अँधियारा।
जाने वह, है प्रभु का ही, चमत्कार जग सारा॥

11. गुरु के ज्ञान से जिसने, अनहद धुन की सुनी आवाज़।
रीझकर गुरु ने गले लगाया, पूर्ण किये सब काज॥
सामी सदा करता है वह, सतलोक का राज।
कभी भी वो होय नहीं, माया का मोहताज॥

12. अनहद की झंकार को, सुना जिसने बांभण कहे।
मिटा संशय उसके मन से, विधि-निषेध† से ऊपर उठे॥
चींटी और हाथी में फिर, साक्षात् परमेश्वर ही दिखे।
परम पद ऐसा पाकर, अपने में ही मगन रहे॥

13. ढूँढ़ निकाला बीच मस्तक के, अमोल नाम का मोती।
मिट गए सकल पाप, जिसने सुनी वह बाँग।
नज़र पड़ी जब मेहर की, सामी छूट गए सब स्वाँग॥

14. इक वाणी‡ ने तो भुलाया, और भँवर में फँसाया।
दूजी वाणी§ जिसने हाथ दे, सागर से पार लँघाया॥
यह गुप्त भेद विरले ने, समझा और समझाया।
सुखी हुआ सामी कहे, जो समझा, उसमें समाया॥

* महान् † कोई काम करने या न करने का शास्त्रीय निर्देश ‡ दुनिया की बोली
§ शब्द धुन

15. रग रग मंझि रागु, आहे ओअंकार जो।
सोधे लहु सरीर मों, मेंघो चएई मागु॥
अन्दरि ओंअकार जो, अथी चानणु ऐं चरागु।
पस्यो तनि सोहागु, जनि दुरुस्त सुञातो दम खे॥

16. मंझे धुनि ध्यानु, अथी धुनि ध्यान में।
समुझी डिसु सामी चए, तूं ईहो आतम ज्ञानु।
अविद्या जो अभिमानु, मिटी वञेई मन मों॥

17. अठई पहर वजे, थी मुरली मन मोहन जी।
रागु रागाई हिकिड़ो, जंहिं मां सामी सभु उपजे॥
बुधी बिनि कननि सां, रजियो कीन रजे।
तोड़े प्रान तजे, तांभी धुनी ध्यान में॥

18. वाणी लखाए, थी साखीअ पद निरबाण खे।
कोड़िनि मंझों को हिकिड़ो, समुझी सुखु पाए॥
डिठो जंहिं गुरगियाति सां, अविद्या पटु लाहे।
सामी समाए, सो अनभई आतम पद में॥

19. डेहीअ मंझि डसे, सतिगुर डिनी सब्द धुनि।
पोइ भंवर गुंजार जां, अमृतु नितु वसे॥
लटक लाए लूंअ लूंअ में, वर्ती दिलि ख़से।
सामी डिसी हसे, पंहिंजे अखें पाण खे॥

15. रोम रोम में समा रहा, ओंकार का राग।
मेंघों* कहे उसे पाने का, खोज शरीर में मार्ग ॥
ओंकार की जोत से अंदर, रोशन हो रहा चिराग।
कद्र की जिसने साँसों की, पाया उसी ने सुहाग॥

16. ध्यान में निहित धुन है, धुन में समाया ध्यान।
समझ और देख सामी कहे, यही है आतम ज्ञान।
जो मिटा देगा मन से, अविद्या का अभिमान॥

17. आठों पहर बज रही, मुरली मनमोहन की।
शब्द-धुन और कर्ता एक, सारी सृष्टि जिससे उपजी॥
सुनती रहे सुरत धुन को, फिर भी जी भरता नहीं।
छूट जाएँ प्राण भी सामी, रहे ध्यान में धुनी॥

18. आत्मा को निर्वाण पद में, शब्द ही जा मिलाए।
कोटिन में कोई एक ही, अनुभव कर सुख पाए॥
गुरु ज्ञान से देखा जिसने, अविद्या का पट हटाए।
आत्म पद के नूर में, सामी वो फिर जा समाए॥

19. देही में ही शब्द धुन, सतगुर ने दी लखाय।
फिर भँवर गुंजार जैसी, नित बरसे अमृतधार॥
दिल छीन लिया गुंजार ने, रोम रोम में मस्ती छाई।
देख दिव्य नेत्र से ख़ुद को, सामी गज़ब ख़ुशी आई॥

* सामी साहिब के गुरु का नाम

ज्योति

1. अजाइबु उपदेसु, सामी डि॒नो सतिगुरुअ।
नूरमहल निरिबा॒ण में, परची कयो परवेसु।
मिटियो किलहि कलेसु, सभ घटि डि॒ठो सुपिरीं॥

2. नेणनि लायो नींहुं, नूरमहल जे नाथ सां।
जिते सिजु न चंडु को, न को राति न डी॒हुं।
बिना बादल मींहुं, सामी सदाई वसे॥

3. पातो जंहिं लीओ, गुरगम पंहिंजे घर में।
बि॒नि बा॒र्युनि जे विच में, डि॒ठो तंहिं डी॒ओ।
सदाई खीओ, सामी रहे सुभाव में॥

4. गुरगम ज्योति ब॒री, अनभइ जी अन्दर में।
खुली पेई पाण ही, सामी दरस दरी॥
डि॒सी मुंहुं महबूब जो, लूंअ लूंअ सभ ठरी।
वेई टिकर टरी, सूर्यु आयो सिर ते॥

प्रभु की ज्योति सभी जीवों में है, लेकिन इस ज्योति के दर्शन उसी जीव को होते हैं जो सतगुरु के उपदेशानुसार अंतर्मुख होकर अभ्यास करता है। सतगुरु की कृपा से जब अंदर इस ज्योति के दर्शन होते हैं, तो अज्ञानरूपी अँधेरा मिट जाता है, मन शांत हो जाता है और अंतर में नाम-रस पीकर जीव परम आनंद की अवस्था में पहुँच जाता है।

1. सामी मेरे सतगुरु ने, दिया अद्‌भुत उपदेश।
निर्वाण के नूरमहल में, गुरु कृपा से किया प्रवेश।
घट-घट देख प्रीतम प्यारा, मिट गए कलह कलेश॥

2. नयनन लगाया नेह, नूरमहल के नाथ से।
ना चन्दा, ना सूरज जहाँ, जहाँ न दिन, न रात।
सामी जहाँ होती सदा, बिन बादल बरसात॥

3. झाँक लिया गुरु ज्ञान से, निज अन्तर में जिसने।
भृकुटी मध्य में, लखी ज्योति उसने।
मगन रहे सामी सदा, अपनी ही धुन में॥

4. गुरु ज्ञान से अन्तर में, ज्ञान की जोत जली।
ख़ुद-ब-ख़ुद खुल गई, सामी खिड़की दरस की॥
स्वरूप देखा प्रीतम का, रोम-रोम में ठंड पड़ी।
उदय हुआ सूरज ज्ञान का, अँधियारी सब दूर हुई॥

5. गुरगम साणु ब॒रियो, अनभइ ड॒िओ घर में।
अविद्या ऊँधइ न रही, सभो कार्यु सर्यो।
ड॒िसी जीउ ठरियो, सामी सार सरूप खे॥

6. पिरींअ पियारियो, भरे पियालो नूर जो।
अंधेरो अन्दर जो, खिन में निवारियो।
अज़ग़ैबी ब॒ारियो, ड॒िओ मुहिंजे ड॒ील में॥

5. गुरु ज्ञान से जल उठी, ज्ञान-ज्योति अन्तर में।
अज्ञान अँधेरा ना रहा, सिद्ध हुए सब काज।
जी में ठंडक पड़ गई सामी, निरख शब्द स्वरूप को॥

6. मेरे प्रीतम प्यारे ने, अमृत प्याला भर पिलाया।
अन्तर का अँधेरा, छिन में ही मिटाया।
मेरी देही के अंतर में, गुप्त दीप जलाया॥

गुरुमुख

1. विरलो को महिमानु, गुरमुखु जाणे पाण खे।
जंहिंखे हंयो सतिगुरुअ, सामी सीतलु बाणु॥
मंझी देहि बिदेहि थियो, छडे पांहिंजो पाणु।
सदा संतनि साणु, मेलो करे मगनु थी॥

2. जुगतनि साणु हले, गुरमुखु सम संसार में।
बधाईं गुरगियाति सां, आतम धनु पले।
कंहिंखे कीन सले, सामी सिक पिरियुनि जी॥

3. गुरमुख रीझायो, महा पुरखु महबत सां।
जाण विञाए पांहिंजी, आज्ञा मंझि आयो॥
सहजे तंहिंखे सतिगुरुअ, अलखु लखायो।
सामी समायो, जल पपोटो जल में॥

4. गुरमुखु कीन घटे, प्रेम प्रीत परतीत खों।
चात्रिक जां चित में, सदा सामी रामु रटे॥
भंवर जां भेदयो रहे, संसो सभु सटे।
बेहद बूंद चटे, अनभइ जे आकास में॥

जो जीव सतगुरु की शरण में आ जाता है, हमेशा गुरु की आज्ञा में रहता है, उस पर सतगुरु की दया का मेघ बरसता है। ऐसा गुरुमुख चातक के समान है जो अपने प्रेम और प्रतीति से गुरु को प्रसन्न कर लेता है और अपनी हस्ती को मिटाकर सतगुरु की रज़ा में राज़ी रहता है। गुरुमुख की रहनी उत्तम है। कोई विरला गुरुमुख ही ख़ुद को इस संसार में मेहमान समझता है।

1. जिसे लगाया सतगुरु ने, सामी शीतल बाण।
विरला ऐसा गुरुमुख, समझे ख़ुद को मेहमान॥
देह में रहकर हुआ विदेह, ख़ुदी करे क़ुरबान।
मेल करे, सदा मगन रहे, संग सन्त सुजान॥

2. समदर्शी हो संसार में, गुरुमुख चले विवेक से।
बाँध लिया पल्ले अपने, आत्म-धन गुरु ज्ञान से।
सामी प्रीतम से लगी प्रीत का, भेद न खोले किसी से॥

3. प्रीत से अपनी गुरुमुख ने, सतगुरु को रिझाया।
मिटाकर अपनी हस्ती को, गुरु शरण में आया॥
सहज ही सतगुरु ने, उसे अलख लखाया।
जैसे जल का बुलबुला सामी, जल में जा समाया॥

4. प्रीत परतीत सतगुरु से, गुरुमुख की कभी ना घटे।
चात्रिक सम गुरुमुख सामी, चित में सदा सुमिरन करे॥
भौंरे सम बिंध गुरुमुख, सब संसा दूर करे।
अन्तर के आकाश में, अमृत बूँद चखे॥

5. गियानिवान गुरमुखु, भाणे मंझि भिनो रहे।
ममत मिटाए मन जी, सम ज़ाणे सुखु दुखु।
पूरनु हिकु पुरुखु, सामी डिसे सभ में॥

6. गुरमुख जो गुज़िरानु, सदा साध संगति में।
जंहिं खे डिनो सतिगुरुअ, सिक समुझ जो दानु॥
रखे न रतीअ जेतिरो, अन्दर में अभिमानु।
सम डिसे भगवानु, चीटीअ अऊं कुंचर में॥

7. गुरमुख सो आहे, जो रहे गुरगियाति में।
बी गलि ज़ाणे कानका, सतिगुर जे साये॥
ज़ाण विञाए पांहिंजी, लूंअ लूअं लिंव लाए।
तंहिं ते वसाए, सतिगुरू मेघु मिहर जो॥

5. ज्ञानवान गुरुमुख सदा, राज़ी रहे रज़ा में।
मिटाए ममता मन की, समरूप रहे सुख दुःख में।
उसी एक प्रभु को, सामी देखे सभी में॥

6. सदा साध संगति में ही, गुरुमुख का गुज़रान।
बख़्शा जिसे सतगुरु ने, प्रेम-परतीत का दान॥
अपने अंदर रखे ना, वो रत्ती भर अभिमान।
क्या चींटी क्या हाथी, सबमें देखे भगवान॥

7. वही है गुरुमुख जो, गुरु आज्ञा लाँघ न जाए।
दूजी बात न जाने कोई, रहे सतगुरु के साए॥
मिटाकर अपनी हस्ती को, रोम रोम में लगन लगाए।
उसपर दया मेहर का, सतगुरु मेघ बरसाए॥

मनमुख

1. पांहिंजो पाण हणे, थो मूरख झुगो मति रे।
हीरा लाल फिटा करे, थो कंकर कचु खणे॥
सामी डिसे कीनकी, नफ़ो नुक्सान गणे।
ताणे मंझि तणे, थो डांवर जियां पाण खे॥

2. सुपने जो संसारु, मूरख जाणनि सति सभु।
काया माया कुल सां, परची कनि प्यारु॥
सामी डिसनि न सम थी, साखी सिरिजनहारु।
नाहकु थिअनि खुवारु, था भुली पाण भरम में॥

3. मूरख हइ हइ कनि, माया कारणि मन में।
सति जाणी संसार खे, नाना दुख सहनि॥
कालु पंहिंजे कंध ते, अंधा कीन डिसनि।
सामी हलिया वञनि, रुअंदा रतु अखिनि मों॥

गुरु के हुक्म के बजाय, मन के हुक्म में रहनेवाले मनमुख जीव की दशा दयनीय होती है। अज्ञानता का शिकार मनमुख जीव प्रभु के नामरूपी हीरे की पहचान नहीं कर पाता। वह माया और मन के विकारों में लिप्त अपना अमूल्य मनुष्य जन्म गँवा बैठता है। माया के नाशवान् पदार्थों से प्रेम करना आम को उखाड़कर झाड़ियाँ बोना या मोतियों के बदले काँच-कचरा इकट्ठा करने के समान है। सामी साहिब ऐसे मनमुखों को चेतावनी देते हैं कि माया में उलझकर जीव सुखी नहीं होते, वे हमेशा काल के हाथों ख़्वार होते हैं।

1. अपने हाथों अपना घर, मूर्ख करे बरबाद।
फेंक कर हीरा लाल, कंकर कचरा रखे सँभाल॥
लगाए ना कभी सामी, नफ़े-नुकसान का हिसाब।
मकड़ी समान उलझ जाता, वह अपने ही जाल॥

2. मूर्ख सच समझता, लेकिन सपना है संसार।
काया माया कुल से अपने, ख़ुश होकर करता प्यार॥
समरूप हो लखे न सामी, साक्षी सिरजनहार।
भूल भरम में ख़ुद ही, नाहक़ होता रहे ख़्वार॥

3. माया कारण मूर्ख मनमुख, हाय हाय करते रहते।
सच जान संसार को, नाना दुःख वो सहते॥
काल कहार बैठा कंधे पर, अंधे उसे नहीं देखते।
ख़ून के आँसू बहा आँखों से, सामी जग से चलते बनते॥

4. मूरख कीन हटे, कूड़ कपट परपंच खों।
मानुख देहि अमोल खे, थो सागर मंझि सटे॥
थूहर लाए घर में, सामी अंम्ब पटे।
मोतियुनि सां मटे, थो वठे कचु करूड़ जो॥

5. ख़ुदीअ मंझि ख़राबु, मूरख लोक अपार थिया।
मनी वेठा सति सभु, जगत जो इसबाबु॥
अगियों काल क़हार जे, सामी झलिनि न ताबु।
हर हर डियनि हिसाबु, समुझ वराए सखिणा॥

6. सामी कीअं अड़ें, तूं अविद्या जे अभिमान में।
सुखी डिठो कोन को, जंहिंखे तपु चढ़े।
रातियूं डींहं सड़े, सो बिना बाहि अन्दर में॥

4. हटता नहीं मूर्ख कभी, कूड़ कपट परपंच से।
मानुष देह अमोल को, बहाए यूँ भवसागर में॥
उखाड़कर सामी आम को, झाड़ लगाए घर में।
ख़रीदे कौड़ी काँच, मोतियों के बदले में॥

5. बरबाद हुए ख़ुदी में, मूर्ख मनमुख जन अपार।
मान बैठे सच सब, सामी जगत असबाब॥
बिना समझ के मूर्ख, बार-बार देते हिसाब।
झेल न पाए कहर तब, जब काल करे ख़राब॥

6. सामी क्योंकर अटका तू, माया के अभिमान में।
सुखी न देखा किसी को, माया के संताप में।
बिन आग दिन-रात, जलता रहता अन्तर में॥

इश्क़

1. नेही निरासो, आस न रखे कंहिंजी।
रहे चन्द्र चकोर जां, दर्सन जो प्यासो॥
कयाईं चरन कमल में, विधि सचीअ वासो।
कीअं करे पासो, सामी तंहिंखां सुपिरीं॥

2. सामी जंहिं चखियो, गुरगम प्यालो पिरेम जो।
अगियों तंहिं अजीब जे, लाहे सिरु रखियो।
सभ में सारु लखियो, जाण विञाए पांहिंजी॥

3. प्रेम बिना परकासु, कंहिंखे थियो कीनकी।
इएं चवे थो नामुदेव, कबीरु अऊं रविदासु॥
करे डिसु कलिपत रे, सामी अनन अभियासु।
त चेतनु चिद आकास, परघटु थियई पाणहीं॥

सभी संतों ने कहा है कि दिलबर के इश्क़ के बिना अंदर इलाही नूर प्रकट नहीं हो सकता। इश्क़ में मस्ताने आशिक़ चकोर के समान प्रीतमरूपी चाँद के दीदार के प्यासे रहते हैं। सामी साहिब कहते हैं कि इश्क़ की डगर आसान नहीं, इस इश्क़ के भँवर में फँसकर कोई बाहर नहीं निकला। यह क़ुरबानी का मार्ग है। इश्क़ में तो प्रेमी सूली पर चढ़ने को तैयार रहते हैं। जैसे जल के बिना मीन, मेघ के बिना चातक और स्वाति बूँद के बिना सीप की अवस्था होती है, इसी तरह आशिक़ महबूब के दीदार के बिना बेदम हो जाता है।

1. प्रेमी रहे बेपरवाह, रखे न किसी की आस।
रखे चन्द्र चकोर सम, पीव दर्शन की प्यास॥
चरण कमल में बिंधकर, करे प्रीतम संग वास।
फिर कैसे मुँह मोड़े सामी, प्रीतम ऐसे प्रेमी से॥

2. सामी जिसने चख लिया, प्रेम प्याला गुरु कृपा का।
उस अनूप के आगे, भेंट किया सिर अहं का।
मिटाकर अपनी हस्ती को, रूप प्रभु का सबमें देखा॥

3. हुआ न अन्तर में किसी के, प्रेम बिना परकास।
ऐसा ही कह गए नामदेव, कबीर और रविदास॥
इक मन इक चित्त होय, सामी कर शब्द अभ्यास।
परगट होगा चेतन ख़ुद, अन्तर के चिदाकाश* में॥

* चेतन आकाश जो प्राणों का स्रोत है।

4. पुरझी पाइजि पेरु, अशिक़ जे आड़ाह में।
सूखम खों सूखम अथी, सुपेरियुनि जो सैरु॥
मोटी मोटियो कोनको, ग़ैबी गुझो घेरु।
ज़ाणिजि फंद न फेरु, अथी ऊन्हीं ग़ाल्हि अजीब जी॥

5. बिना ख़ाश ख़रीद, थिये न इश्क़ु अल्लाह जो।
इएं चवनि था औलिया, सामी सभि शहीद॥
मरी जनि मुर्शिद खों, वती दर्शन दीद।
कनि अभेदी ईद, मिली निति महबूब सां॥

6. अथी महांगो, सामी सौदो प्रेम जो।
जे तो ख़्वाहिश खरीद जी, त सटि सिर जो सांगो॥
परिची पाइ ग़िचीअ में, गिला जो घांघो।
लंघे पउ लांघो, त मतिलबु थियई मन जो॥

7. अश्क़ु नाहे आसानु, सामी चयो सतिगुरुअ।
पुछु तनी खों ख़बिरां, जनि सभुकी कयो क़ुर्बानु॥
रखनि न रतीअ जेतिरो, अन्दर में अभिमानु।
तोड़े जखे जहानु, तांभी मस्तु रहनि महिराण में॥

8. महबती मरे, दरसन कारणि दोस जे।
जिएं मछली नीर खों, पलक न थिए परे॥
चात्रिकु कारण मेंघ जे, सदा विरिलाप करे।
सामी ध्यानु धरे, सिप रहे सुवांतीअ जी॥

4. रखना क़दम सोच समझ के, ये आशिक़ी है इक भँवर।
सूक्ष्म से सूक्ष्म है, प्रीतम की डगर॥
मुड़कर वापस कोई न आया, घुम्मन घेरी में घिरकर।
है यह राज़ प्रीतम का सामी, इसमें कोई फँद न फेर॥

5. ख़्वाहिश न जागे दिल में गर, इश्क़ ख़ुदा ना हो ख़रीद।
इश्क़ की राह चले जो सामी, कह गए औलिया और शहीद॥
सीखा मरना मुर्शिद से जिसने, दिल में पाई उसने दीद।
महबूब से अपने मिलकर वह, मनाए सदा ही ईद॥

6. बहुत ही महँगा होता है, सामी सौदा प्रेम का।
गर है चाह ख़रीद की तो, तज संग सिर* का॥
ख़ुशी ख़ुशी से गले में अपने, डाल ले फँदा गिला† का।
कर ले पार यह राह, तो मनोरथ पूरा हो मन का॥

7. बताया सतगुरु ने सामी, ये इश्क़ नहीं आसान।
पूछो हाल उन आशिकों का, किया जिन्होंने सब क़ुरबान॥
रखें न रत्ती भर भी, अन्तर में अभिमान।
गिला करे दुनिया, तो भी, मस्ती के सागर में गलतान॥

8. जैसे जल बिन मीन को, जीना नहीं सुहाता।
मेघ की ख़ातिर चात्रिक जैसे, सदा विलाप है करता॥
सीप का ध्यान सदा सामी, स्वाति बूँद में रहता।
दोस्त के दीदार बिना, आशिक़ भी मर जाता॥

---

* अहंकार † भाव दुनिया के शिकवे शिकायतें

आशिक़

1. महबती मस्तान, परिचा रहनि पाण में।
बिना सिक सज़ण जे, बी सुधि रखनि कान॥
अठई पहर अर्श में, जपिनि रीअ ज़बान।
जगु ज़ाणे नादान, सामी साखी सभ जा॥

2. महबती मतलबु, कहंसा रखनि कीन की।
रहे जनि जे रूह में, रातियां डींहां रबु॥
सामी वेठा साफ़ु थी, छडे कूड़ु क़लबु।
लाए लोकु लक़बु, तां भी मस्तु रहनि महिराण में॥

3. आशिक़ से चइजनि, जनि ते आशिक़ु पाण थियो।
जिते डिसनि नेण भरे, तिते पिरीं डिसनि॥
उथंदे विहंदे निंड में, सामी मिलिया रहनि।
अहिड़े रंगि रचनि, से आशिक़ मों माशूक़ थिया॥

4. आशिक़नि जी राह, जुदा सभ जहान खों।
हलनि हटु छडे करे, बिना चिन्ता चाह॥
कंहिंजी रखनि कीनकी, पिरियनि रीअ परवाह।
सदा कनि सलाह, सामी सुपेरियनि जी॥

सामी साहिब ने ऐसे आशिक़ों का वर्णन किया है जो अपने महबूब की मुहब्बत में मस्त रहते हैं। उन्हें महबूब की चाहत के सिवा और कुछ नहीं सूझता। आठों पहर उसी की याद में मस्त रहते हैं—उठते-बैठते, सोते-जागते प्रीतम में लीन रहते हैं।

1. महबूब के मस्ताने, मस्त रहें अपनी मस्ती में।
सिवा चाहत महबूब की, रहते सदा बेख़ुदी में॥
बेज़ुबाँ ज़िक्र चलता, आठों पहर अर्श में।
सामी ख़ुदा गवाह उन का, दुनिया नादान माने जिन्हें॥

2. आशिक़ करें आशिक़ी, वास्ता रखें न किसी से।
समाया रहता इक रब ही, दिन रात उनकी रूह में॥
पाक साफ़ हो जाते सामी, रहे न झूठ कपट दिल में।
लोक लाज से बेपरवाह, ग़र्क़ मस्ती के सागर में॥

3. आशिक़ वही कहलाएँ, आशिक़ ख़ुद ख़ुदा जिनपर।
भीगी पलकें देखें जहाँ, देखें प्रीतम उन नैनन में॥
उठत बैठत सोवत जागत, सामी लीन रहें उसी में।
रँगे रहें जो ऐसे रंग में, आशिक़ से माशूक़ बनें॥

4. सारे जहान से न्यारी, इन आशिक़ों की राह।
छोड़ा ख़ुदी को अपनी, रहें बिन चिन्ता, बिन चाह॥
सिवा प्रीतम अपने की, दूजे की नहीं परवाह।
सामी प्रीतम की सदा, करे सिफ़त सालाह॥

5. आशिक़नि झेड़ो, सामी लायो यार सां।
विझें कोहु गिचीअ में, कूड़ो बखेड़ो ?
असां कयो तुंहिंजो, डोहु गुनाहु कहिड़ो।
वेही निबेरो, सनमुखु करि कुठनि जे॥

6. जंहिं प्रेमीअ पुरधी, ऊन्हीं गाल्हि अश्क़ जी।
घर मों खाणि खुशीअ जी, लोड़े तंहिं लधी॥
सामी सिक सच्चीअ सां, छिके गंढि बधी।
घटी ऐं वधी, वञे कीन वहंवार में॥

7. आशिक़ से चइजनि, जे सूरी सहनि सिर ते।
पांहिंजे हथनि पांहिंजी, लाहे खल डिअनि॥
जियण अऊं मरण जो, संसो सोचु न कनि।
सदा ग़रक़ु रहनि, सामी सार सरूप में॥

5. आशिक़ों ने किया गिला, सामी अपने प्रीतम से।
कौन सा कर दिया हमने, गुनाह और क़सूर तेरा ?
जो डाल दिया गले हमारे, ये इश्क़ का बखेड़ा।
अब बैठ सामने, कर फ़ैसला, क़त्ल हुए आशिक़ों का॥

6. बूझ लिया जिस आशिक़ ने, गहरा राज़ ये इश्क़ का।
खोजकर अपने ही अन्दर, ख़ज़ाना पाया ख़ुशियों का॥
कसकर बाँधी गाँठ उसने, सामी सच्ची प्रीत की।
अब न डगमगाती उसे, लोक लाज दुनिया की॥

7. जो सूली चढ़ने को तैयार, आशिक़ उसी को कहते।
अपने हाथों से अपनी ही, खाल उतार भेंट में देते॥
ज़िन्दगी और मौत को वो, तली पर धर कर चलते।
दिलबर के दीदार में, सामी सदा वे डूबे रहते॥

विरह

1. पलक न थिए परे, सिक त तुंहिंजी सुपिरीं।
हणे नितु अंदर में, बेहदि बाण भरे॥
सुतति मिलु सामी चए, कुठीअ करमु करे।
तड़ीं जीउ ठरे, जड़ीं डिसां हिननि अखिनि सां॥

2. लायइ वेल वड़ी, साजन सिक सोढ़ो कयो।
अची अध मुअनि ते, कन्दें मिहर कड़ीं॥
तड़फी तड़फी तन मों, वेन्दो साहु जड़ीं।
सामी चए तड़ीं, मेलो कन्दें कनि सां?

3. सजण सूर चया वञनि, न विछोड़े जा।
तुंहिंजीअ सिक अन्दर में, छेक अनेक कया॥
सामी चए चकोर जां, सुकी नेण रहिया।
कड़ीं करे दया, दरिसनु डींदें दास खे॥

प्रियतम के विरह में प्रेमी की तड़प बढ़ती जाती है। प्रियतम के विछोड़े में उसका दिल छलनी हो जाता है। अपने प्रियतम के दीदार के लिये जीवात्मा सदा पुकार करती है। वह विरह में रोते-रोते बेहाल हो जाती है। प्रेमी विरह में तन, मन, धन सब कुछ प्रीतम पर क़ुरबान कर देता है। उसके दिल में चकोर के समान केवल प्रियतम के दीदार की चाहत रहती है।

1. चाह तेरे मिलन की प्रीतम, पल भर भी न होए दूर।
दिल के अन्दर मारे हरदम, बिरह बाण भरपूर॥
जल्दी आ मिल कहता सामी, घायल पे दया कर दे।
जब देखूँ इन आँखों से, जी मेरा तभी ठरे॥

2. बेबस किया तेरी चाहत ने, साजन क्यों लगाई इतनी देर।
अध मुई बिरहन पर, कब करोगे तुम मेहर॥
तड़प-तड़प इस तन से, जब निकल जाएँगे प्राण?
कहे सामी तब फिर, किससे मिलोगे तुम आन॥

3. पीड़ बिछोड़े की मेरे साजन, मुख से कही न जाय।
तड़प तेरी हरदम दिल को, छलनी करती जाय॥
सूख गए नैन ये मेरे, सामी जैसे नैन चकोर।
कब होगी दया दास पर, दर्शन होंगे तोर॥

4. सुड्की सड्ड करे, नारि निमाणी बिरिहणी।
तुंहिंजीअ सिक अलग कयो, पिरीं थीउ न परे॥
पुछी पांधेरुनि खों, रूआं रतु भरे।
सघां न धीर धरे, सुतति मिलु सामी चए॥

5. पलि पलि कनि पुकार, कुठा दर्द फ़िराक़ जा।
पसण काणि पिरींअ जे, रूअनि ज़ारों ज़ार॥
सामी चए सरीर जी, रखनि कान सम्भार।
आउ मिलु जानी यार, न त डियूं था दमु दर्द में॥

6. बिरही रोए रतु, अठई पहर अखिनि मों।
सजण तुंहिंजीअ सिक कयो, मनु मुंहिंजो मोहितु॥
थी बेहद बांवरी, भुली सभु जगतु।
सामी चए सुततु, अची मिलु मुईअ सां॥

7. करियां कहड़ो हालु, दर्दवन्दनि जे दिल जो?
कुठा कुछनि कीन की, लिंव लाए थिया लालु॥
सदके कयाऊं सिक तों, सामी तन मन मालु।
तिन खे कोहु करींदो कालु, जे मरण खों अगे मुआ?

4. नार निमानी बिरहन की, बुला रहीं सिसकियाँ तुझे।
चाह तेरी में भूली सब जग, दूर न होना अब तुम मुझसे॥
जो दें पैग़ाम उनसे ज़रा पूछना, ख़ून के आँसू रोती हूँ मैं।
सामी कहे जल्दी आ मिल, धर न सकूँ धीरज अब मैं॥

5. दर्दे जुदाई में हुए क़त्ल, पल पल करें पुकार।
प्रीतम के दीदार की ख़ातिर, रोवें ज़ारों ज़ार॥
सामी कहे अपने तन का, रहता नहीं कुछ ध्यान।
आ मिल जानी यार वरना, कर देंगे जान क़ुरबान ॥

6. मोहित हुआ मन मेरा, सजना तेरी चाहत से।
हुई बेहद बावरी मैं, भूली सब जग मन से॥
बिरहन बहाए ख़ून के आँसू, आठों पहर आँखों से।
सामी कहे जल्दी आ मिल, मुझ बेहाल बिरहन से॥

7. दर्द भरे बिरही दिल का, कैसे कहूँ मैं हाल।
क़त्ल आशिक़ कुछ न बोलें, हो गए लिव में लाल॥
क़ुर्बान किया प्रीत में सामी, तन मन धन सब माल।
मौत से पहले मरें जो, उनका क्या करेगा काल॥

मन

1. चयो वञे न मनु, कारो ग़ाढ़ो कमिरो।
जंहिंजो माउ न पीउ को, नको देसु वतनु॥
खिण में करे खियाल सां, टेई लोक गवनु।
कड़ीं पिनी थिए परिसनु, कड़ीं सामी रुए राज़ में॥

2. रचे मनु खललु, फाहीअ फाथो पाणहीं।
सामी समुझे कीन की, मूरखु माया छलु॥
सांति न पाए मिरग जां, डिसी मिरगी जलु ।
तड़ीं थिए अचलु, जड़ीं परची डिसे पाण खे॥

3. रचियो मन जग़तु, अण हून्दो संसारु सभु।
समुझी डिसु सामी चए, तूं कढी ममता मतु॥
मिली महद जननि सां, कढु कूड़ो कलिपतु।
त अनभइ आतम ततु, पिरितखु डिसें पाण में॥

4. जन्हीं जीतियो मनु, तन्हीं जीतियो जग़ खे।
लधाईं गुर गियाति सां, घर मों आतम धनु॥
साखी डिसे सभ में, पाए गियान अन्जनु।
सदाई परिसन, सामी रहे सुभाव में॥

सामी साहिब ने मन की स्वाभाविक चंचलता का चित्र प्रस्तुत किया है। यह मन गिरगिट के समान बहुरंगी है, यह पलभर में तीनों लोकों में चक्कर लगा लेता है। यह मूर्ख मन अपने ही फंदे में फँस जाता है। इसकी तृष्णा कभी शांत नहीं होती। सामी साहिब जीव को उपदेश देते हैं कि मोह छोड़ दे, संसार सपना है, मन के बहकावे में न आ। इसलिए आप चेतावनी भी देते हैं कि हे मन! तू अपने हाथों अपने ही पैरों पर कुल्हाड़ा मत मार। अहंकार को छोड़ दे, वरना काल की मार सहनी पड़ेगी। जो जीव सतगुरुरूपी हक़ीम की नाम-सुमिरनरूपी औषधि खा लेता है, उसके सभी विकार दूर हो जाते हैं।

1. कहा न जाए मन काला कि लाल? गिरगिट समान बहरूपिया।
देश वतन ना कोई इसका, ना कोई बाप न मईया॥
पलभर में करे ख़्याल से, तीन लोक का भ्रमण।
कभी रोता राज में सामी, कभी भीख माँग रहे प्रसन्न॥

2. ख़लल पैदा करके मन, अपने ही फंदे में फँस जाय।
मूरख माया के छल को, सामी समझ ना पाय॥
देखकर मरु जल, मृग शांति न पाय।
पहचाने जब ख़ुद को, मन अचल हो जाय॥

3. रचा मन जिस जग में, सपना है वो संसार।
देख समझ सामी कहे, मोह ममता निकाल॥
मिलकर संतजनों से, निकाल झूठ भ्रम मन से।
तब होए आत्म तत्त्व का, प्रत्यक्ष अनुभव अंतर में॥

4. जीत लिया जग सारा उसने, जिसने जीता अपना मन।
पा लिया गुरु ज्ञान से, अन्तर में आत्म धन॥
नज़र आए सबमें वही, जब डाला ज्ञान का अंजन।
सामी अपने आप में, रहे सदा मगन॥

5. ड॒ाढो मनु छली, जंहिं कयो ड॒ुखियो ड॒ेह खे।
जंहिं खसे विधी खिल सां, सभजी मति भली॥
विरलो को गुरमुख बचो, ब॒ांभंणु चए ब॒ली।
जंहिं खे संधि सली, सतिगुर सुख अगम जी॥

6. मन जी ग॒ाल्हि ग॒णी, कलिपत कटे कीनकी।
सियाणा पंडित सूरमा, बीठा हथ हणी॥
सामी सटि मथे तों, अविद्या पिंड खणी।
त अचे पाण धणी, महिर करेई मौज जी॥

7. मूरख मन अज॒ाण, तूं पाणु न पसें पाण में।
पाए मुँहु मढ़िहीअ में, जपें तां न अज॒ाण।
पंहिंजे हथें पाण, थो हणे कुहाड़ो कंधते॥

8. मतां मन मोटो, मिली थिए माया सां।
हणदुइ कालु क़हर जो, सामी चए सोटो॥
जाग॒ी अविद्या निंड मों, ख़ियालु सटे खोटो।
छड॒े थीउ छोटो, त पिरीं करेई पंहिंजो॥

9. मन मदायूं जे कयूं, थो ड॒िसी हाउं ड॒के।
बिना ताण तबीब जे, हर हर पियो भिटिके।
सामी फकी फके, तड॒ीं निमाणो निहालु थिए॥

5. यह मन छलिया बेहद, जग को करे जो दु:खी।
छीन ली हँसी-हँसी में, सब की मत भली॥
ब॒ांभणु कहे बचे कोई, विरला गुरुमुख बलवान।
अगम सुख की जिसको, दी सतगुरु ने पहचान॥

6. मन की बातें मानकर, भ्रम जाल कभी न कटे।
सयाने पंडित सूरमा भी, लाख जतन कर थके॥
फेंक अज्ञान की गठरी, सामी धरी जो सिर पर।
फिर मौज में आकर, करेंगे प्रभु दया तुझ पर॥

7. ऐ मूर्ख अज्ञानी मन, ख़ुद ना करे अपनी पहचान।
अन्तर्मुख हो झाँके ना, प्रभु न जपे नादान।
अपने हाथों अपने ही कंधे, कुल्हाड़ा मारे तू अनजान॥

8. मन रे! माया से मिलकर, सामी मत करना अहंकार।
वरना काल कहर के सोटे की, पड़ेगी तुझ पर मार॥
जाग अज्ञान की नींद से, खोटे ख़्याल दूर भगा।
छोड़ ख़ुदी, हो जा निमाना, तो प्रीतम लेगा तुझे अपना॥

9. किये गुनाह जो मन ने, देख उसे दिल काँपता।
समर्थ गुरु हकीम बिना, जीव हरदम रहे भटकता।
सामी खाय औषध नाम की, रोगी निरोग हो जाता॥

माया

1. माया सभि मोहे,जीअ कया वसि पांहिंजे।
विधाईं वल छल सां, अन्धा बंधी टोए॥
पुठी डेई पाण खे, कनि होए होए।
आतमु धनु खोहे, मूरख वेठा मति रे॥

2. सभ खे रूआरे,मोहे माया मोहिणी।
भवाए भव सिंध में, नाना रूप धारे॥
सामी बचियो को सूरमो, सतिगुरु संभारे।
बेहद डिओ बारे, पूरनु डिठो जंहिं पिअ खे॥

3. माया महां प्रबलु, जीती वञे न जीअ खों।
विधो जंहिं जहान में, अण हूंदो ख़ौफ़ु ख़ललु॥
उथंदे विहन्दे निन्ड में, सामी छडे न छलु।
को गुरुमुखु रहे अचलु, जंहिं जागी डिठो पाण खे।

माया ऐसी महाठगिनी है जो सब जीवों को मोहकर अपने वश में कर लेती है और अंधे कुएँ में जा गिराती है। सामी साहिब उपदेश देते हुए कहते हैं कि माया के छल से वही बचता है जिसे सतगुरु बचाएँ। संतों की शरण ही माया के विष से बचाव का एकमात्र साधन है।

1. अपने वश में कर लेती है, मोहकर सबको माया।
छल वल से बाँधकर, अंधकूप में जा गिराया॥
मोड़कर मुँह अपने से, करते हाय-हाय।
ऐसे मूरख नासमझी में, आतम धन गँवाय॥

2. रुलाती सबको माया मोहिनी, फँसाकर मोह जाल में।
भाँति-भाँति के रूप धरे, बहाए भवसिंध में॥
सामी बचे कोई सूरमा, बचाए जिसे सतगुरु।
बेहद का दीप जलाकर, जिसने अंदर देखा दिलबर॥

3. जीत न सके जीव उसे, महाप्रबल है माया।
ग़ज़ब का उसने जगत में, ख़ौफ़ ख़लल फैलाया॥
उठत बैठत जागत सोवत, सामी न छोड़े छल वल।
हो जाग्रत पहचाने खुद को, गुरुमुख वही रहे अचल॥

4. सभोई संसारु, माया कयो वसि पांहिंजे।
खाली छड़ियाईं कोन को, जुवानु, बिरिधु ऐं बारु॥
विझी जारु भरम जो, कयाईं ख़लक़ ख़ुवारु।
को सामी पुरखु सचारु, जागी छुटे जिन खों।

5. महां प्रबलु माया, तरी सघे कोन को।
जंहिं सिध, साधक, जोगी, जती भव में भुलाया॥
मनी वेठा पाण खे, कलिपत जी काया।
सतिगुर छड़ाया, से सामी छुटा दुःख खों॥

6. कई ख़लक़ अंधी, माया मोह ममत सां।
मिरग तिरशना जे जल में, वञे सभ वहंदी॥
विरले कंहिं गुरमुख लधी, किरपा साण कंधी।
बांभणु जंहिं बंधी, पंजई किया वसि पांहिंजे॥

7. माया मोह मई, कंहिंखे छड़े कीनकी।
विझी जारु भरम जो, सभ विसु वसि कई॥
सामी बचियो को सूरमो, साधूअ सरनि पई।
लोकु परलोकु बई, लंघे चढ़ियो लख ते।

4. वश में किया माया ने, सारा ये जहान।
छोड़ा न किसी को ख़ाली, बालक बूढ़ा जवान॥
भ्रमजाल में डाल सभी, जीव किए परेशान।
सामी छूटे उससे कोई, जाग्रत सन्त सुजान॥

5. महाप्रबल माया का सागर, पार न कोई कर पाया।
सिध-साधक-जोगी-जति, भ्रम में सबको भुलाया॥
मान बैठे भ्रमवश, अपने आपको काया।
वे ही छूटे जन्म मरण से सामी, जिन सतगुरु आन छुड़ाया॥

6. मोह ममता से सब जग, अंधा किया माया ने।
बहते जाते हैं सभी, मृगतृष्णा के जल में॥
किसी विरले गुरुमुख ने पाया, किरपा से किनारा।
बांभण कहे उसने, पाँच विकारों पर वश पाया॥

7. छोड़े न कभी किसी को, खुमार माया मोह का।
जग सारा वश में किया, डालकर जाल भरम का॥
सामी बचा कोई सूरमा, जो सन्त शरण पड़ा।
लोक परलोक दोनों ही, लाँघ मंज़िल पर चढ़ा॥

कर्मकांड

1. पण्डितु पुकारे, सारु बुधाए सभ खे।
सामी पांहिंजे मन जी, ममिता ना मारे॥
रखी दुईत अन्दर में, समिता डेखारे।
हलियो सो हारे, मानुख देहि अमोल खे॥

2. कंहिं खों कीन लहे, अविद्या कुल्फु अन्दर जो।
तोड़े तीर्थ तप करे, दुख बुख सभि सहे॥
त्यागु करे घर बार जो, गुफ़ा मंझि रहे।
साधूअ सरनि पए, त सुखी थिए सामी चए॥

3. वेद पुरान पढ़ी, मैल न मिटी मन जी।
तप तीरथ साधन करे, डिठो गुफ़ा मंझि वड़ी॥
समुझ रे सामी चए, उल्टी मैल चढ़ी।
भगी भरम घड़ी, मिली महदि जननि सां॥

विद्वान, बुद्धिमान धर्मग्रंथ पढ़कर सार तत्त्व को समझने का प्रयास करते हैं, परंतु आंतरिक अनुभव के बिना वे द्वैतभाव में रह जाते हैं। पूजा-पाठ, जप-तप, तीर्थभ्रमण, गुफा-निवास आदि सब बहिर्मुखी कर्म हैं, जब कि संतजन बताते हैं कि प्रभु मिलन का रास्ता अंदर है। मनुष्य-जन्म का असली मक़सद तो तभी पूरा हो सकता है, जब जीव संतों की शरण में जाए, क्योंकि प्रभु मिलन का भेद संतजन ही बताते हैं।

1. पुकार पुकार कर पंडित, सब को सार समझाए।
सामी अपने मन की, ममता मार न पाए॥
अपने अन्दर द्वैत को रखता, समता बाहर दिखाए।
मानुष देह अमोलक, हारे और उठ जाए॥

2. अन्तर के अज्ञान का ताला, कोई खोल न पाए।
चाहे तप तीरथ करे, भूख दुःख सब सहे॥
त्याग करे घर बार का, जा गुफा में रहे।
जब सन्त शरण पड़े, होगा सुखी सामी कहे॥

3. वेद पुरान कई बार पढ़े, मिटी न मैल मन की।
तप तीरथ साधन किए, रह देखा गुफा में भी॥
कर्म किए विवेक बिन, उल्टी मैल चढ़ी।
संतजनों से मिलकर सामी, फूटी भरम गगरी॥

4. पथर पूजा कनि, देवु न डिसनि देहि में।
पंडितु जाणी पाण खे, कर्मनि मंझि बझनि॥
साखां संतनि जूं बुधी, मरमु न रखनि मनि।
से कीअं रंगि रचनि, सामी सुपिरियनि जे॥

5. कनी कियड़ो जोगु, कनी तपु तीरथ साधन किया।
कनी दान पुन जग होम किया, कनी तियागियो भोगु॥
कनी वेद पुरान पढ़ी करे, सभु चेतायो लोगु।
मिटयो तहिंजो रोगु, जहिंखे सामी मिलियो सतिगुरु॥

6. घर में रामु रहे, मूरखु फोल्हे दह दिसा।
जप तप साधन जोग में, सामी देह दहे।
नाहक़ु दुख सहे, थो पुठी डेई पाण खे॥

4. खोजें न प्रभु देही में, पत्थर को हैं पूजते।
ख़ुद को मानें ज्ञानी ध्यानी, बँधे रहें कर्मकांड में॥
सुनकर सीख संतों की, प्रभु मिलन का भेद न समझें।
कैसे रचें फिर वे सामी, उस प्रीतम के रंग में॥

5. कोई तप तीर्थ साधन करे, कोई करता योग।
कोई दान-पुण्य यज्ञ होम करे, कोई त्यागे भोग॥
कोई वेद पुराण पढ़कर, सब चेताये लोग।
सामी मिला सतगुरु जिसे, मिटे उसके रोग॥

6. घर में रहे राम, मूरख ढूँढ़े दसों दिशा में।
देता कष्ट देह को सामी, जप तप साधन योग में।
नाहक़ दुःख सहता, पीठ करके अपने आप से॥

विविध

1. विरिलो को ज़ाणे, साध संगति जे सुख खे।
सामी जंहिंखे सतिगुरु, परिची घरि आणे।
मोजां सो माणे, अठई पहर अजीब सां॥

2. भागनि ड़िनो भरु, तड़ी जागी समुझ अन्दर में।
कयो साध संगति जो, अदब सां आदरु॥
तंहिं पियारे राम रसु, खोलियो दसों दरु।
मेटे दुखु ड़मरु, सामी मिलियो सरुप सां॥

3. लखें लोक तरिया, मिली साध संगति सां।
वञी पुछु तिन्हीं खों, जनीं हिरिदे वाक धरिया।
सदा रहनि ठरिया, सामी सीतल जल जां॥

4. मनियो जंहिं वचनु, सामी साधि संगति जो।
करे वसि वेसाह सां, वेठो मनु पवनु॥
सहजे तहिं सेवक ते, प्रभु थियो परिसनु।
ज़ाणी पंहिंजो जनु, पलक परांहों न थिये॥

सामी साहिब ने प्रभु मिलाप में सहायक कुछ अन्य पहलुओं का वर्णन भी किया है। प्रभु मिलन के अभिलाषी को साधु की संगति में रहने की हिदायत दी जाती है, क्योंकि उनकी संगति में ही रहनी निर्मल होती है। जो संतों की शरण में जाकर उनकी बताई युक्ति से नाम का अभ्यास करता है, वह गुरुमुख बन जाता है। फिर वह अपने प्रीतम के अलावा किसी की चाह नहीं रखता। वह हर हालत में प्रीतम की रज़ा में ख़ुश रहता है, उसके अंदर से अहंकार मिट जाता है, उसे सब जगह प्रभु की लीला ही दिखाई देती है और वह प्रभु से मिलाप करके उसी में लीन हो जाता है।

1. विरला ही कोई जाने, साध संगति के सुख को।
सामी सतगुरु निहाल हो, घट अंतर ले जाए जिसको।
आठों पहर प्रीतम संग, आनंद-मौज मनाए वो॥

2. भाग मेरे जब जागे, जागा विवेक अन्तर में।
संगत की संतन की, आदर और अदब से॥
खोला दसवाँ द्वार, अमीरस दिया पिला।
दुःख संताप मिटे सभी, सामी प्रभु से जा मिला॥

3. संतों की संगत में, लाखों लोग तरे।
जाकर पूछो उनसे, जिन हिरदे वचन धरे।
सामी शीतल जल समान, सदा शांत रहे॥

4. सामी साधु संतों का, माने जो वचन।
वश किया विश्वास से, उसने चंचल मन॥
सहज उस सेवक पे, प्रभु हुए प्रसन्न।
पल भर दूर ना रखे, जाने अपना जन॥

5. जेकी सरनि पिया, सामी साध संगति जे।
तिनि जा पूरे सतिगुरुअ, कारिज सिधि कया।
वेरी मितिर थिया, ममति न रही मन में॥

6. आहिनि अगम अपारु, राहां राम मिलण जूं।
तनि सभिनी में हिकिड़ी, साध संगति निरिवारु॥
सामी मिल तनिहीं सां, करे पिरेम पियारु।
त दोस्त जो दीदारु, ड्रिसीं भेद भरम रे॥

7. गुज़िरी सा गुज़िरी, बाक़ी रखु रहति सां।
वञी साध संगति में, सामी पउ किरी।
त परिची पाण पिरीं, खणी वठनी हथ सां॥

8. नकी कथि गियानु, नकी धारिज मौन खे।
नकी घुमु घरनि में, नकी धरि ध्यानु॥
समुझ रे सामी चए, अथी सभु अभिमानु।
पाए पदु निर्बाणु, तूं मिली महदजननि सां॥

9. इहो दानु घुरे, जिज्ञासी जगदीस खों।
सन्तनि सापुरिसनि सां, मुंहिंजो जीउ जुड़े॥
प्रेम प्रीत वेसाह खों, सामी कीन मुड़े।
अविद्या गंढि छुड़े, साध संगति जे धीर सां॥

10. इहो दानु घुरे, सामी साध संगति खों।
सदा मनु महबूब जे, आज्ञा मंझि टुरे।
फुर्नो कोन फुरे, अविद्या जे अहंकार जो॥

5. सामी संतजनों की, जो जन शरण पड़े।
पूरे सतगुरु ने, कारज उनके सिद्ध किये।
बैरी मित्र बने, रही ना ममता मन में॥

6. प्रभु मिलन की राहें, हैं अगम अपार।
उन सब में साध संगत ही, ले जाती भव पार॥
सामी मिल उन्हीं से, कर प्रेम प्यार।
बिना भेद भरम के, होगा प्रीतम का दीदार॥

7. बीत गई सो बीत गई, बाक़ी वक़्त सँभाल ले।
जाकर साध संगत में, सामी ख़ुद को सौंप दे।
रीझकर फिर प्रीतम तेरा, उबार ले तुझको हाथ दे॥

8. न कर धारण मौन तू, ना कर ज्ञान बखान।
घूम ना तू घर घर में, ना तू धर ध्यान॥
समझ ले सामी कहे, ये है सब अभिमान।
संतजनों से मिलकर, तू पा ले पद निर्वाण॥

9. यही दान माँगे सेवक, उस जगदीश से।
मन मेरा जुड़ा रहे, संत महापुरुषों से॥
सामी मुड़े ना कभी, विश्वास प्रेम-प्रीत से।
अविद्या की गाँठ खुले, करे जो साध-संग धैर्य से॥

10. सामी साध संगति से, यही माँगता दान।
मन सदा महबूब की, चले आज्ञा मान।
अहंकार के अज्ञान का, कभी न उठे तूफ़ान॥

11. सभुको रामु चए, मरम वराए मुँह सां।
कोड़िन में को हिकिड़ो, गुरमुखु रहत रहे॥
साधे मन पवन खे, सामी सारु लहे।
कड़ी कीन वहे, सन्से जे सागर में॥

12. सो साधुजनु ज़ाणु, जो साधे मनु शुद्ध करे।
दुख सुख लाभ अलाभ में, रहे साबूतीअ साणु॥
सामी चए सभ कंहिं जो, केवलु घुरे कल्याणु।
कढी पंहिजो पाणु, पीए पीआरे राम रसु॥

13. अखिनि मंझि ओताक़, आहे यार अजीब जी।
सदा पसनि सिक सां, महबती मुशताक़ु॥
जे जीअंदे थिया जग खों, ब़ांभणु चए बेबाक।
ख़लिवतनि जी खाक़, लाए वेठा लाल थी॥

14. मोमिनु मुसलिमानु, कोड़िनि में को हिकिड़ो।
जो वासिल थी वहदत में, कढी गैर गुमानु॥
नूरमहल जे नींव ते, सैल करे सुजानु।
तंहिं खे सभु जहानु, ज़ाणे दोसु ख़ुदा जो॥

15. सभ जे घरि आहे, प्रेम पदारथु राम धनु।
सामी ड़िसे कोन को, मुंहुं मढ़ीअ पाए।
सतिगुरु लखाए, त ड़िसे पदु अखिनि सां॥

11. राम बोलें सब मुख से, पर मरम जान न पाए।
कोटिन में कोई एक ही, गुरमुख की रहनी अपनाए॥
पवन सम चंचल मन जो साधे, सामी सार वह पा लेता।
संशय के सागर में फिर, कभी नहीं वह बहता॥

12. उसको ही साधू जानो, जो अंकुश लगा मन शुद्ध करे।
दुख सुख हानि लाभ में, मन को अपने, अडोल रखे॥
सामी कहे हर किसी का, भला सदा माँगता रहे।
मिटाए ख़ुदी को अन्दर से, अमीरस पीए और पिलाए॥

13. आँखों बीच बैठक है, मेरे यार महबूब की।
टकटकी लगाए देखें सदा, दीवानगी जिन्हें मुहब्बत की।
ब़ांभणु कहे इस जग से, जीते जी वे मुक्त हुए।
खाक़ लगाकर संतजनों की, वे अनमोल रतन हुए॥

14. कोटिन में कोई एक ही, है सच्चा मुसलमान।
वहदत में जा समाया, निकाल ग़ैर गुमान॥
नूरमहल की ज़मीं पर, सैर करे सुजान।
दोस्त ख़ुदा का उसको, जाने सारा जहान॥

15. प्रेम पदारथ राम धन, है सबके घट अन्दर।
सामी कोई न देखे, अपने अन्तर झाँककर।
सतगुरु लखाए तो लखे, अन्तर आँख से मंज़िल॥

16. करे भाउ भगति, सामी तरु संसारु तूं।
बेड़ी करि वेसाह जी, चपो महबत मति॥
सतिगुर पुरखु मलाहु करि, पतणु कढु कुमति॥
साखी जाणी सति, त पहुंचे पारि भरम खों॥

17. दया धर्मु वीचारु, जिनखे डिनो सतिगुरुअ,
से तपति मिटाए मन जी, ठरी थियड़ा ठारु॥
भिना रहनि भगति में, पाए दिब दीदारु ।
अन्दरि बाहिर यारु, सामी डिसनि हिकिड़ो॥

18. सदा करि शुकुरु, सामी दरि दोसनि जे।
भावें मिले मलीदो, भावें सुको टुकरु॥
रखी चाह अन्दर में, घटि वधि कडीं न घुरु।
टोर इन्हींअ में टुरु, त खासो खिलवदार थिएं॥

19. हैरत अउं हासो, अचे हिक अचिरज ते।
साई फोल्हे आत्मा, खंडु खे पताशो॥
गहणो ढूंढे सोन खे, मिटीअ खे कासो ।
पाणी प्यासो, सामी रहे नितु नीर जो॥

16. धरके भाव भक्ति, सामी तर जा तू संसार।
नाव बना विश्वास की, मुहब्बत की पतवार॥
सतगुरु पुरुष मल्लाह कर, जब कुमति लगान अदा करेगा।
सच्चा साथी मान उसे, भ्रम से पार तब पहुँचेगा॥

17. जिनको बख़्शा सतगुरु ने, दया-धर्म विचार।
हुए वे शीतल शान्त, मन की तपन निवार॥
भीने रहें भक्ति के रंग में, दिव्य दर्शन पाकर।
सामी बस इक प्रीतम ही, देखें अन्दर बाहर॥

18. दोस्तों के दर पर सामी, सदा शुक्र कर उनका।
चाहे मिले चिकनी चुपड़ी, चाहे सूखा टुकड़ा॥
रख चाह प्रीतम की अन्दर, कुछ और कभी ना माँग।
इसी रीत में चलें अगर, राज़दार होगा ख़ासम-ख़ास॥

19. हँसी और हैरानी होती, देख एक अचरज को।
साँईं को ढूँढ़े आत्मा, बताशा ढूंढे खाँड को॥
गहना ढूँढ़े सोने को, मिट्टी को ढूँढ़े प्याला।
ईश्वर जीव रहें इक घर में, सामी जीव प्यासे का प्यासा॥